



वर्ष : 22

अंक : 01

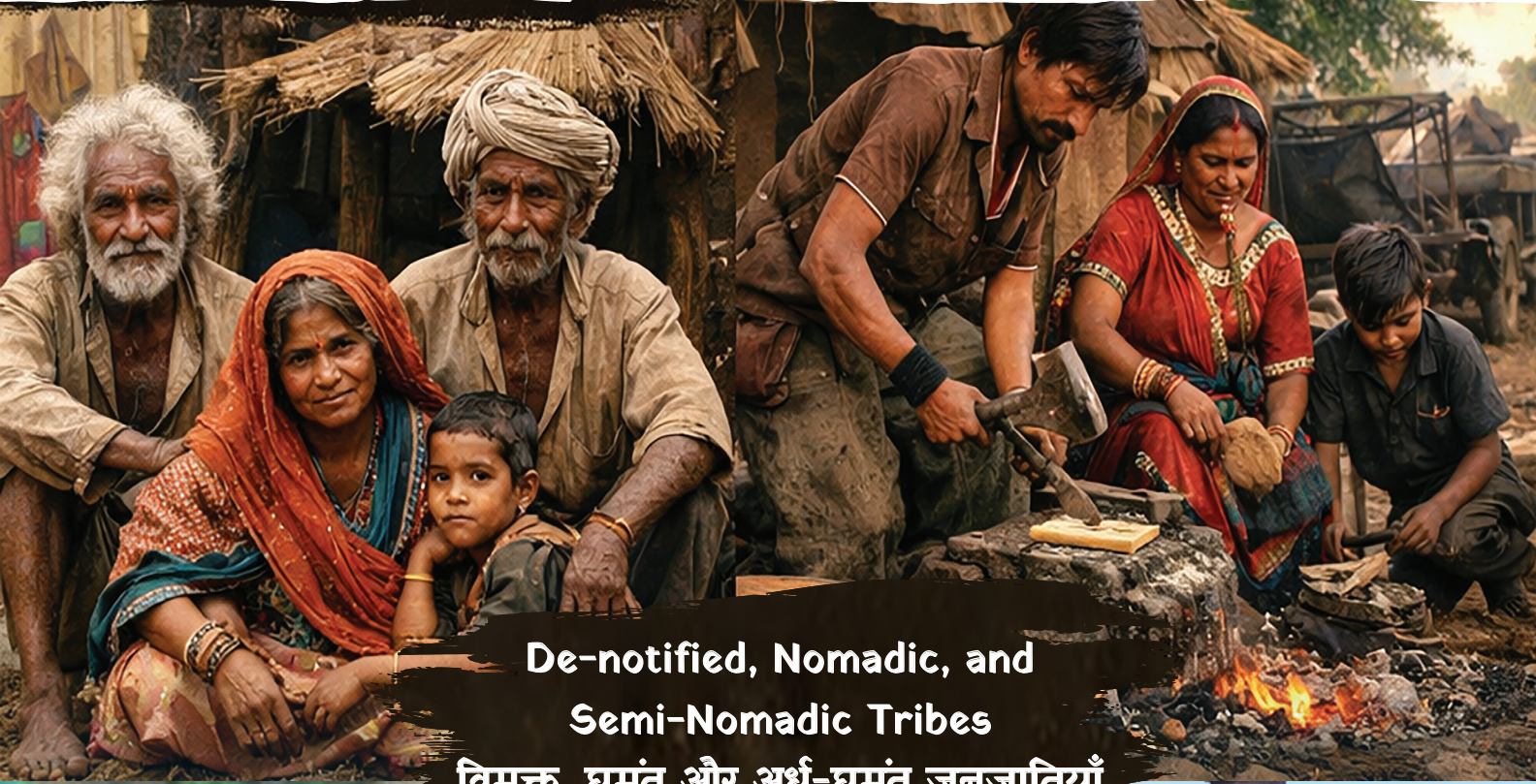
RNI No. DELIN/2000/9036

सामाजिक न्याय संदेश

जनवरी-फरवरी-मार्च 2026

समता, समानता और समरसता का वाहक

ISSN 2455-6181



De-notified, Nomadic, and
Semi-Nomadic Tribes

विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू जनजातियाँ



डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

15 जनपथ, नई दिल्ली-110001

सत्यमेव जयते

77वें गणतंत्र दिवस के उपलक्ष्य में SEED एवं SMILE लाभार्थियों के साथ संवाद एवं मिलन समारोह

77वें गणतंत्र दिवस के उपलक्ष्य में सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रीय स्मारक में SEED एवं SMILE योजनाओं के लाभार्थियों के साथ एक गरिमामय "संवाद एवं मिलन समारोह" का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम केवल एक औपचारिक आयोजन न होकर, मंत्रालय के नेतृत्व एवं लाभार्थियों के मध्य प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करने का सशक्त माध्यम सिद्ध हुआ। इस अवसर पर डॉ० वीरेंद्र कुमार, माननीय केन्द्रीय मंत्री, मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित रहे। उनके साथ मंत्रालय के सचिव स्तर के अधिकारी, अन्य वरिष्ठ अधिकारीगण, विभिन्न राज्यों से आए प्रतिनिधि तथा बड़ी संख्या में SEED एवं SMILE योजनाओं के लाभार्थी उपस्थित रहे। कार्यक्रम का उद्देश्य लाभार्थियों को एक साझा मंच प्रदान करना था, जहाँ वे अपनी जीवन यात्रा, योजनाओं से प्राप्त सहयोग, स्वरोजगार, पुनर्वास एवं सामाजिक मुख्यधारा में पुनर्स्थापन के अनुभव सीधे मंत्रालय के नेतृत्व के समक्ष प्रस्तुत कर सकें।



संवाद सत्र के दौरान विभिन्न राज्यों से आए लाभार्थियों ने बताया कि SEED योजना के अंतर्गत प्राप्त शैक्षिक सहायता, आवासीय सहयोग, स्वास्थ्य समर्थन एवं आजीविका अनुदान ने उनके जीवन में दीर्घकालिक सकारात्मक परिवर्तन लाया है। वहीं SMILE योजना के अंतर्गत कौशल विकास प्रशिक्षण, पुनर्वास सहायता एवं उद्यमिता सहयोग ने उन्हें आत्मनिर्भर बनने की दिशा में सशक्त किया है। अनेक लाभार्थियों ने स्वरोजगार स्थापना तथा सामाजिक सम्मान की पुनर्प्राप्ति के प्रेरक अनुभव साझा किए।



माननीय केन्द्रीय मंत्री ने अपने संबोधन में कहा कि गणतंत्र दिवस केवल संवैधानिक गौरव का प्रतीक नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समान अवसर और गरिमामय जीवन के अधिकार के प्रति पुनः प्रतिबद्धता का दिवस है। उन्होंने उल्लेख किया कि माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा परिकल्पित "विकसित भारत" के संकल्प को साकार करने में वंचित एवं हाशिये पर स्थित वर्गों का सशक्तिकरण अत्यंत आवश्यक है। SEED एवं SMILE जैसी योजनाएँ इसी राष्ट्रीय लक्ष्य की दिशा में ठोस एवं प्रभावी कदम हैं। लाभार्थियों की सफलता की कहानियों को उन्होंने नए भारत की सामाजिक प्रगति का सजीव प्रमाण बताया।

कार्यक्रम ने मंत्रालय, प्रशासनिक नेतृत्व एवं लाभार्थियों के बीच विश्वास, पारदर्शिता और सहभागी शासन की भावना को सुदृढ़ किया। यह संवाद एवं मिलन समारोह इस तथ्य का प्रमाण रहा कि सरकार की योजनाएँ वास्तविक जीवन में सकारात्मक परिवर्तन ला रही हैं।

संरक्षक

डॉ. वीरेन्द्र कुमार

माननीय केंद्रीय सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्री

कार्यकारी मंडल

श्री सुधांशु पंत

सचिव, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग

श्री वी. अप्पाराव

सदस्य सचिव, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग

श्री आकाश पाटील

निदेशक, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र-सह-डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रीय स्मारक

सलाहकार मंडल

प्रो. (डॉ.) मधुकरभाई एस. पडवी

कुलपति, बिरसा मुंडा जनजातीय विश्वविद्यालय, राजपीपला, जिला नर्मदा, गुजरात

प्रो. (डॉ.) शीला राय

सदस्य, अनुसंधान संस्थान समिति

भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय (सेवानिवृत्त) प्रधानाचार्य (सेवानिवृत्त),

सेंट जेवियर्स महाविद्यालय, जयपुर, राजस्थान

प्रो. (डॉ.) अरविंद कुमार सिंह

अभ्यागत आचार्य, डॉ. अम्बेडकर चेंबर फॉर बुद्धिस्ट स्टडीज लुम्बिनी बौद्ध विश्वविद्यालय, सेंट्रल कैंपस,

रुपंदेही, नेपाल (भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (ICCR), विदेश मंत्रालय, भारत सरकार)

निदेशक, अंतर्राष्ट्रीय मामले एवं सहायक आचार्य, बौद्ध अध्ययन एवं सम्यता विभाग,

गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश

डॉ. गुरमीत दोरजे

निदेशक, केंद्रीय हिमालयी संस्कृति अध्ययन संस्थान (CIHCS)

दाहंग, पश्चिम कामेंग जिला, अरुणाचल प्रदेश

(संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार)

प्रो. सुभाष कुमार सिंह

प्राचार्य, सत्यवती महाविद्यालय

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सम्पादक

डॉ. सीरम कुमार सुमन

अनुसंधान सहयोगी, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र

संपादकीय मंडल

डॉ. निकी चतुर्वेदी

सह आचार्य-सह-विभागाध्यक्ष, इतिहास और भारतीय संस्कृति विभाग

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

डॉ. शिवपूजन पाठक

सह आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग

आर्यभट्ट महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. रक्तिम पातर

सह-आचार्य, ऐतिहासिक अध्ययन केंद्र

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. तलअत प्रवीण

सहायक आचार्य (वरिष्ठ), पाली और बौद्ध अध्ययन विभाग

सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

डॉ. चन्द्रशेखर पासवान

सहायक आचार्य, बौद्ध अध्ययन विभाग

गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश

डॉ. चन्दन कुमार

सहायक आचार्य, इतिहास विभाग

सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. प्रीति शर्मा

सहायक आचार्य, अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन संकाय

गुजरात केंद्रीय विश्वविद्यालय, वडोदरा, गुजरात

डॉ. राहिल चौहान

सहायक आचार्य, शिक्षा एवं शिक्षा प्रौद्योगिकी संकाय

ओडिशा केंद्रीय विश्वविद्यालय, कोरापुट, ओडिशा

संपादकीय सहयोग

सुश्री युक्ता

पुस्तकालय सहायक, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र

श्री अनिल कुमार सिंह

व्यवस्थापक, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र

तकनीकी सहयोग

सुश्री हनीफा एहतेशाम

यंग प्रोफेशनल, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र

सुश्री सबिता कुमारी

ऑनकडा प्रविष्टि परिचालक, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र

प्रकाशक

डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय

15 जनपथ, नई दिल्ली-110001

ई-मेल:

snsdaic123@gmail.com

वेब साइट:

www.daic.gov.in

प्रकाशक व मुद्रक

श्री आकाश पाटील

निदेशक

डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र-सह-डॉ.

अम्बेडकर राष्ट्रीय स्मारक

(सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के लिए संपादित और मुद्रित)

अस्वीकरण

“सामाजिक न्याय सन्देश में प्रकाशित सामग्री में शोध पत्र, अभिमत, विचार, दृष्टि आदि लेखकों के हैं। डीएआईसी अथवा संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है।

प्रथम पृष्ठ पर लगाये चित्र का उद्देश्य सूचानात्मक है। इसका उपयोग किसी मौद्रिक लाभ के लिए नहीं है।

समस्त कानूनी मामलों का निपटारा केवल दिल्ली/नई दिल्ली के क्षेत्र एवं न्यायालयों के अधीन होगा।



सत्यमेव जयते



अनुक्रमणिका / Contents

1. अमृत काल में सामाजिक न्याय और अधिकारिता: विकसित भारत 2047 की दिशा में विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू समुदायों का सशक्तिकरण 1
डॉ. वीरेन्द्र कुमार
2. विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए नीतियों का क्रियान्वयन: एक विस्तृत विश्लेषण 5
डॉ. लोहित राम¹
डॉ. शबाना मोमिन²
3. **From Stigma to Inclusion: Policy Perspectives on De-Notified, Nomadic, and Semi-Nomadic Tribes in Contemporary India** 13
Prabhu Preetam Roul¹
Dr. Dipanshu Sharma²
Ishita Mishra³
Pravendra Singh Birla⁴
4. **Submissive Virtues, Subversive Voices: Gendered Moral Economies and the Narrative Discipline of the Jātaka Tales** 25
Prof. Snigdha Singh¹
Dr. Swasti Alpana²
5. हाशिये से मुख्यधारा तक: विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों की शैक्षिक, स्वास्थ्यगत और आर्थिक चुनौतियाँ 35
प्रवेन्द्र सिंह बिरला¹
डॉ. क्षमा पाण्डेय²
6. **Empowering the Most Vulnerable: Policy Interventions and Livelihood Transformation of Yerukala Tribal Women in Andhra Pradesh** 45
Dr. D. Chandramouli Reddy
7. **Education, Language, and Empowerment: Addressing Socio-Economic Challenges of Koya Tribal Women through English** 57
Dr. Venkanna K.
8. **Legal Forensic Validity and Socio-Economic Reality of De-notified and Nomadic Tribes in Uttar Pradesh** 68
Dr. Gaurav Mishra¹
Dr. Shiv Poojan Prasad Pathak²



संपादकीय

भारतीय गणराज्य की आत्मा सामाजिक न्याय, समता और मानव-गरिमा में निहित है। संविधान-निर्माण के समय भीमराव आंबेडकर ने स्पष्ट प्रतिपादित किया था कि राजनीतिक लोकतंत्र तभी स्थायी होगा, जब सामाजिक एवं आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना होगी। वर्तमान शासन की "सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास, सबका प्रयास" की अवधारणा सामाजिक समावेशन की दिशा में एक महत्वपूर्ण दार्शनिक आधार प्रस्तुत करती है। यह केवल नीतिगत उद्घोष नहीं, बल्कि ऐतिहासिक अन्याय के परिमार्जन और सामाजिक पुनर्संरचना का आह्वान है। विमुक्त, घुमन्तू तथा अर्द्धघुमन्तू जनजातियाँ इस ऐतिहासिक उत्तरदायित्व की केन्द्रीय कसौटी हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से ये समुदाय प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में व्यापार, परिवहन, पशुपालन, लोककला, धातुकर्म, औषधीय ज्ञान तथा सांस्कृतिक प्रसार के वाहक रहे हैं। बंजारा, नट, सांसी, कंजर, गाडिया लोहार, सपेरा जैसे समुदायों ने भारत के विभिन्न क्षेत्रों को आपस में जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी जीवन-शैली "गतिशीलता" (mobility) पर आधारित थी, जो वस्तु-विनिमय, स्थानीय अर्थव्यवस्था और सांस्कृतिक आदान-प्रदान का माध्यम थी। औपनिवेशिक शासन द्वारा प्रवर्तित क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट (१८७१) ने अनेक समुदायों को "जन्मजात अपराधी" घोषित कर दिया। स्वतंत्रता के उपरान्त १९५२ में इस अमानवीय विधान का निरसन हुआ, तथापि सामाजिक कलंक, आर्थिक वंचना तथा प्रशासनिक उपेक्षा दीर्घकाल तक विद्यमान रही। भौगोलिक दृष्टि से विमुक्त, घुमन्तू एवं अर्द्ध-घुमन्तू जनजातियाँ भारत के लगभग सभी क्षेत्रों में विस्तृत रूप से फैली हुई हैं, जिनकी सघन उपस्थिति विशेषतः राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र तथा गुजरात में दृष्टिगोचर होती है। इन समुदायों की जीवन-पद्धति ऐतिहासिक रूप से पर्यावरणीय अनुकूलन, संसाधनों के गतिशील उपयोग तथा स्थानीय पारिस्थितिकी के साथ सामंजस्य पर आधारित रही है। रेगिस्तानी अंचलों में पशुपालन और व्यापारिक गतिशीलता, वन क्षेत्रों में जड़ी-बूटी संग्रह एवं पारंपरिक औषधीय ज्ञान, तथा शहरी परिधियों में हस्तशिल्प, प्रदर्शनकारी कलाओं और सेवा-आधारित व्यवसायों के माध्यम से इन्होंने अपनी विशिष्ट आजीविका संरचनाएँ विकसित कीं। तथापि, स्थायी निवास के अभाव, भूमि-अधिकारों की अनिश्चितता, तथा पहचान-पत्रों एवं प्रशासनिक अभिलेखों में अनुपस्थिति ने इन्हें राज्य की औपचारिक संरचनाओं से दूर रखा, जिससे ये समुदाय सामाजिक-आर्थिक मुख्यधारा से वंचित रह गए। सांस्कृतिक दृष्टि से ये समुदाय भारतीय लोक-संस्कृति के जीवंत संवाहक हैं, जिनकी परंपराएँ केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति ही नहीं, बल्कि सामुदायिक ज्ञान और ऐतिहासिक स्मृति का भी भंडार हैं। लोकनृत्य, लोकगीत, कठपुतली कला, जादू-विद्या, पारंपरिक चिकित्सा, पशुपालन कौशल, हस्तशिल्प एवं प्रदर्शनकारी कलाओं के विविध रूपों में इनकी गहन उपस्थिति भारत की सांस्कृतिक बहुलता को सजीव बनाती है। यह विरासत केवल आजीविका का साधन नहीं, बल्कि भारत की अमूर्त सांस्कृतिक परंपरा का अभिन्न अंग है, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक और व्यावहारिक माध्यमों से संरक्षित रही है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह समुदाय "परिधीयता" (marginality) और "गतिशीलता" (mobility) के अद्वितीय समन्वय का उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसके बावजूद प्रमुख चुनौतियाँ यथावत हैं-पृथक केंद्रीय सूची का अभाव, पहचान-पत्रों की कमी, भूमि-अधिकारों का अभाव, तथा १,५२६ समुदायों में से २६९ का अस्पष्ट वर्गीकरण (राष्ट्रीय आयोग, २०१८)। यह स्थिति नीति-निर्माण और क्रियान्वयन के मध्य अंतर को दर्शाती है।

इसी संदर्भ में विमुक्त, घुमन्तू एवं अर्द्ध-घुमन्तू जनजातियों का संरक्षण केवल सामाजिक न्याय का प्रश्न नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अस्तित्व, ज्ञान-परंपरा और सभ्यतागत निरंतरता का भी प्रश्न है। इन समुदायों में निहित पारंपरिक ज्ञानकृत्तैसे लोक-चिकित्सा, जैव-विविधता का संरक्षण, जलवायु-अनुकूल जीवन-पद्धतियाँ, पशुपालन तकनीक एवं लोककला-आधुनिक विकास विमर्श के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण संसाधन हैं। यदि इन ज्ञान-प्रणालियों का संरक्षण नहीं किया गया, तो न केवल इन समुदायों की पहचान संकटग्रस्त होगी, बल्कि भारत की बहुलतावादी सांस्कृतिक विरासत का एक अमूल्य भाग भी विलुप्त होने की आशंका से ग्रस्त होगा। अतः संरक्षण की दृष्टि से बहुआयामी हस्तक्षेप की आवश्यकता है। सर्वप्रथम, इन समुदायों की सांस्कृतिक पहचान, लोकज्ञान एवं परंपराओं का वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित दस्तावेजीकरण किया जाना चाहिए, ताकि यह विरासत स्थायी रूप से संरक्षित हो सके। द्वितीयतः, लोककलाओं एवं पारंपरिक कौशलों को आधुनिक आर्थिक संरचनाओं और बाजार से जोड़कर उन्हें सतत् आजीविका के साधन के रूप में विकसित किया जाना आवश्यक है। तृतीयतः, शिक्षा प्रणाली में भारतीय ज्ञान प्रणाली के अंतर्गत इन समुदायों के ज्ञान को स्थान देकर उसे औपचारिक मान्यता प्रदान की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त, समुदाय-आधारित संग्रहालयों, सांस्कृतिक केंद्रों, जीवंत परंपरा संरक्षण कार्यक्रमों तथा डिजिटल अभिलेखन के माध्यम से इनकी सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित एवं प्रसारित किया जा सकता है। इस प्रकार, विमुक्त, घुमन्तू एवं अर्द्ध-घुमन्तू जनजातियों का संरक्षण केवल अतीत की स्मृति को सुरक्षित रखने का प्रयास नहीं है, बल्कि यह एक समावेशी भविष्य की आधारशिला है, जहाँ विकास, संस्कृति और सामाजिक न्याय परस्पर पूरक बनकर एक समग्र राष्ट्रीय दृष्टि का निर्माण करते हैं।

भारत सरकार के आधिकारिक आकलनों के अनुसार देश में लगभग १,४०० से अधिक समुदाय इस वर्ग में आते हैं तथा उनकी अनुमानित जनसंख्या लगभग १० करोड़ है। सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के आधिकारिक प्रतिवेदनों के अनुसार देश में लगभग १,४०० समुदाय इस वर्ग से संबद्ध हैं तथा उनकी अनुमानित जनसंख्या लगभग १०: अर्थात् १३-१५ करोड़ के मध्य है (राष्ट्रीय आयोग, २०१८)। अतः यह आवश्यक है कि वित्तीय आवंटन का पूर्ण उपयोग, राज्य-केंद्र समन्वय का सुदृढीकरण, तथा



सत्यमेव जयते



डेटा-आधारित नीति-निर्माण को प्राथमिकता दी जाए। सामाजिक न्याय की संकल्पना तभी पूर्ण होगी जब समाज के अंतिम व्यक्ति तक समान अधिकार और अवसर पहुँचें। यही विकसित भारत का वास्तविक पथ है—जहाँ संविधान की भावना केवल दस्तावेज में नहीं, बल्कि प्रत्येक नागरिक के जीवन में प्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित हो।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के अधीन २०१९ में विमुक्त, घुमन्तू एवं अर्द्धघुमन्तू समुदाय विकास एवं कल्याण बोर्ड की स्थापना की गई। इसके अंतर्गत आर्थिक सशक्तीकरण हेतु आर्थिक सशक्तीकरण योजना (सीड) प्रारम्भ की गई, जिसके अंतर्गत पाँच वर्षीय अवधि (२०२१-२६) के लिए ₹२०० करोड़ का प्रावधान किया गया है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, २०२२)। संसदीय उत्तर के अनुसार २०२३-२४ में ₹१५.०० करोड़ तथा २०२४-२५ में ₹३२.४३ करोड़ का व्यय किया गया, जो कुल प्रावधान का लगभग २४: है (प्रेस सूचना ब्यूरो, २०२५क)। जुलाई २०२५ तक ३,४३८ स्व-सहायता समूहों का गठन तथा ४६,०६७ सदस्यों की सहभागिता दर्ज की गई है; ७,००० से अधिक आयुष्मान भारत कार्ड वितरित हुए तथा ५४१ विद्यार्थियों को निःशुल्क प्रतियोगी परीक्षा कोचिंग सहायता प्रदान की गई (प्रेस सूचना ब्यूरो, २०२५ख)।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय की नीतियाँ और कार्यक्रम समावेशी विकास, सामाजिक सशक्तिकरण तथा संवैधानिक मूल्यों की स्थापना के प्रति प्रतिबद्ध हैं। आर्थिक सशक्तीकरण योजना (सीड) योजना के चार प्रमुख घटक—शिक्षा सशक्तिकरण, स्वास्थ्य सुरक्षा, आजीविका संवर्धन तथा प्रधानमंत्री आवास योजना के माध्यम से आवास सहायताकृसरचनात्मक समावेशन की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, २०२२) तथापि पृथक केंद्रीय सूची का अभाव, प्रमाणपत्र निर्गमन में विलंब तथा १,५२६ समुदायों में से २६९ का अस्पष्ट वर्गीकरण (इदाते आयोग प्रतिवेदन) जैसी चुनौतियाँ नीति-कार्यान्वयन को प्रभावित करती हैं (राष्ट्रीय आयोग, २०१८)। मंत्रालय के वार्षिक प्रतिवेदन २०२३-२४ तथा २०२४-२५ में स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि मंत्रालय सामाजिक न्याय के लक्ष्य को वास्तविक रूप में साकार करने हेतु व्यापक कार्यक्रम चला रहा है। प्रतिवेदन के अनुसार वर्ष २०२३-२४ में लगभग १८.७५ लाख छात्रवृत्ति लाभार्थियों को विश्वविद्यालय, आईटीआई तथा विद्यालय स्तर पर प्रत्यक्ष लाभ अंतरण के माध्यम से सहायता दी गई, जबकि २०२४-२५ में यह संख्या २०.४२ लाख से अधिक रही (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, २०२५)। इसी प्रकार, स्व-सहायता समूहों (SHGs) का आंकड़ा वृद्धि दर १२.८% रहा, जहाँ कुल ४.५६ लाख भूखे को समर्थन प्रदान किया गया, जिससे ३५.४८ लाख से अधिक परिवारों को आर्थिक लाभ मिला (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, २०२५)। वार्षिक प्रतिवेदन २०२४-२५ में यह तथ्य भी सम्मिलित है कि मंत्रालय ने कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों को २.३ लाख शिक्षार्थियों तक विस्तृत किया, तथा प्रधानमंत्री स्ट्रीट वेंडर्स आत्मनिर्भर निधि (पीएम स्वनिधि योजना), प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम तथा अन्य स्वरोजगार कार्यक्रमों के माध्यम से १.१५ लाख युवाओं को स्वरोजगार सहायता प्रदान की गई (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, २०२५)। स्वास्थ्य सुरक्षा कवरेज के अंतर्गत आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना (PM-JAY) कार्ड धारियों की संख्या २.८५ करोड़ पार हुई, जिससे सामाजिक स्वास्थ्य सुरक्षा में उल्लेखनीय वृद्धि हुई (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, २०२५)। इसके अतिरिक्त, डीएनटी/एनटी/एसएनटी समुदायों के कार्यान्वयन में राज्य-केंद्र समन्वय एवं लक्षित वित्तीय उपयोग पर विशेष बल रखा गया है, जिससे योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित हुआ। स्थानीय स्तर पर लाभार्थी पहचान प्रणालियों के डिजिटलीकरण और GIS-आधारित निगरानी तंत्र से लाभार्थियों की वास्तविक स्थिति का सटीक डेटा संकलित किया गया, जिससे पारदर्शिता तथा लक्ष्य-नियोजन अधिक प्रभावी हुआ (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, २०२५)। इन आँकड़ों के आधार पर स्पष्ट होता है कि मंत्रालय ने शिक्षा-वित्त पोषण, स्वास्थ्य सुरक्षा, कौशल विकास, आजीविका सशक्तिकरण और सामाजिक सुरक्षा उपायों को एकीकृत रूप से लागू कर वरिष्ठ नागरिकों, दिव्यांगजनों एवं वंचित समुदायों की जीवन गुणवत्ता एवं सामाजिक प्रतिष्ठा में ठोस प्रगति की है।

माननीय केंद्रीय मंत्री डॉ. वीरेन्द्र कुमार के नेतृत्व में मंत्रालय ने अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, दिव्यांगजन, वरिष्ठ नागरिक तथा नशामुक्ति से संबंधित योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन को विशेष प्राथमिकता दी है। छात्रवृत्ति योजनाओं का सरलीकरण, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण की सुदृढ़ व्यवस्था, दिव्यांगजन सशक्तिकरण हेतु सहायक उपकरण वितरण, तथा सामाजिक समरसता को बढ़ावा देने वाले जागरूकता कार्यक्रम मंत्रालय की प्रतिबद्धता को स्पष्ट करते हैं। वर्तमान शासन-दृष्टि में “सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास और सबका प्रयास” का सिद्धान्त सामाजिक समावेशन की आधाररेखा है। यह उद्घोष केवल राजनीतिक नारा नहीं, बल्कि नीति-निर्माण की समावेशी दार्शनिक दिशा है, जिसके अंतर्गत ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदायों को राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में प्रतिष्ठित करना लक्ष्य है। विकसित भारत २०४७ की संकल्पना तभी सार्थक होगी, जब प्रत्येक नागरिक को विधिसम्मत पहचान, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, स्वास्थ्य-सुरक्षा और सम्मानजनक आजीविका का सुनिश्चित आश्वासन प्राप्त होगा। यही सामाजिक लोकतंत्र की वास्तविक स्थापना तथा संवैधानिक दायित्व की पूर्णता है। माननीय केंद्रीय मंत्री के मार्गदर्शन में मंत्रालय ने सेवा-प्रदाय प्रणाली को अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी और परिणामोन्मुख बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण पहल की है। वंचित समुदायों तक योजनाओं की पहुँच सुनिश्चित करने के लिए प्रौद्योगिकी-आधारित निगरानी, क्षेत्रीय संवाद, तथा जनसहभागिता पर विशेष बल दिया गया है। इस प्रकार मंत्रालय का कार्य केवल प्रशासनिक दायित्व तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समान अवसर और गरिमापूर्ण जीवन के संवैधानिक संकल्प को साकार करने की दिशा में एक सतत राष्ट्रीय प्रयास है।

डॉ. सौरभ कुमार सुमन

अनुसंधान सहयोगी, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र



“विशेष आलेख”

अमृत काल में सामाजिक न्याय और अधिकारिता: विकसित भारत 2047 की दिशा में विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू समुदायों का सशक्तिकरण

सारांश

अमृत काल की अवधारणा के अंतर्गत भारत सरकार ने विकसित भारत 2047 का लक्ष्य निर्धारित किया है। इस लक्ष्य का मूल आधार समावेशी विकास है, जिसमें समाज के प्रत्येक वर्ग को विकास की प्रक्रिया में सहभागी बनाना आवश्यक है। विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू समुदायों का सशक्तिकरण इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। ऐतिहासिक रूप से उपेक्षा, आपराधिककरण और प्रशासनिक अदृश्यता का सामना करने वाले ये समुदाय आज भी शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, पहचान और आजीविका जैसे बुनियादी अधिकारों से वंचित हैं। विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदाय केवल सामाजिक नीति के विषय नहीं हैं, अपितु भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक विविधता, ऐतिहासिक विरासत एवं सामाजिक गतिशीलता के जीवंत प्रतीक हैं। शिक्षा, आजीविका, सामाजिक सुरक्षा और सांस्कृतिक पुनर्स्थापन जैसे आयामों के माध्यम से इन समुदायों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जा सकता है। विमुक्त, घुमंतू तथा अर्ध-घुमंतू समुदाय भारतीय समाज की प्राचीन सांस्कृतिक संरचना का अभिन्न अंग रहे हैं। ऐतिहासिक रूप से इन समुदायों की आजीविका पशुपालन, व्यापार, लोककला, पारंपरिक चिकित्सा तथा सांस्कृतिक प्रदर्शन से जुड़ी रही है। इस दृष्टि से विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू समुदायों को भारतीय परम्परा में सामाजिक जीवन की गतिशील शक्ति के रूप में देखा जा सकता है। अमृत काल में इनके सशक्तिकरण के लिए किए जा रहे प्रयास सामाजिक न्याय, समान अवसर तथा मानवीय गरिमा की स्थापना की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हैं। विकसित भारत 2047 की परिकल्पना तभी वास्तविक रूप में सफल सिद्ध होगी जब समाज का प्रत्येक वर्ग, विशेषतः ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदाय, समान अधिकारों, अवसरों एवं सम्मान के साथ राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में सक्रिय रूप से सहभागी बन सके।

भारतीय ज्ञान-परम्परा में समाज को किसी स्थिर अथवा एकरूप संरचना के रूप में नहीं देखा गया, अपितु उसे विविध समुदायों, जीवन-शैलियों तथा व्यवसायों के समन्वित एवं गतिशील समूह के रूप में समझा गया है। वैदिक वाङ्मय से लेकर महाकाव्यों तक अनेक ग्रन्थों में भ्रमणशील, वनवासी, पशुपालक तथा लोकजीवन से सम्बद्ध समुदायों का उल्लेख प्राप्त होता है, जो केवल सामाजिक संरचना के अंग मात्र नहीं थे, अपितु सांस्कृतिक आदान-प्रदान, व्यापार-विस्तार, लोकज्ञान के संवहन तथा संचार के प्रमुख माध्यम भी थे (शर्मा, 2012)। तथापि, औपनिवेशिक शासन की प्रशासनिक नीतियों ने

इन समुदायों को क्रमशः सामाजिक परिधि की ओर धकेल दिया तथा 'आपराधिक जनजाति अधिनियम, 1871' के माध्यम से इन्हें जन्मजात अपराधी घोषित कर इनके आवागमन, आजीविका एवं सामाजिक व्यवहार पर कठोर प्रतिबंध आरोपित किए गए (राधाकृष्ण, 2001)। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात वर्ष 1952 में इस अधिनियम को निरस्त कर इन्हें 'विमुक्त' घोषित किया गया, किन्तु सामाजिक चेतना में विद्यमान पूर्वाग्रह तथा 'आदतन अपराधी अधिनियम' जैसे वैधानिक प्रावधानों के कारण इनका वास्तविक पुनर्वास सुनिश्चित नहीं हो सका, फलतः ये समुदाय दीर्घकाल तक सामाजिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक वंचना के चक्र में आबद्ध रहे। वर्तमान समय में भी इन समुदायों की स्थिति अत्यंत विषम है; साक्षरता दर निम्न, स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच सीमित, आजीविका असंगठित क्षेत्र पर निर्भर तथा स्थायी संसाधनों का अभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है (नीति आयोग, 2018)। पहचान-पत्रों के अभाव के कारण ये समुदाय शासकीय योजनाओं से वंचित रह जाते हैं, जिससे 'नीतिगत अदृश्यता' एवं 'कल्याण बहिष्करण' की समस्या और अधिक गहन हो जाती है।

डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर द्वारा प्रतिपादित सामाजिक न्याय का सिद्धान्त इस परिप्रेक्ष्य में अत्यंत प्रासंगिक है, जिसमें सामाजिक लोकतंत्र को स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व के समन्वित आधार पर स्थापित करने का आग्रह किया गया है (अम्बेडकर, 1945)। अम्बेडकर के अनुसार राजनीतिक लोकतंत्र की स्थायित्वता सामाजिक एवं आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना पर निर्भर करती है, अतः विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों का सशक्तिकरण केवल कल्याणकारी नीति का विषय नहीं, अपितु लोकतांत्रिक संरचना की स्थिरता की अनिवार्य शर्त है। इक्कीसवीं शताब्दी के तृतीय दशक में भारत 'अमृत काल' की ऐतिहासिक यात्रा पर अग्रसर है, जिसका लक्ष्य वर्ष 2047 तक एक विकसित, समावेशी एवं आत्मनिर्भर राष्ट्र का निर्माण करना है। 'विकसित भारत 2047' की परिकल्पना का मूलाधार समावेशी विकास है, जिसमें समाज के प्रत्येक वर्ग को समान अवसर एवं संसाधनों तक पहुँच सुनिश्चित करना आवश्यक है।

अमृत काल में केंद्र सरकार द्वारा विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के सशक्तिकरण को 'समावेशी विकास' तथा 'अंतिम छोर तक पहुँच' के दृष्टिकोण से प्राथमिकता प्रदान की गई है, जो 'सबका साथ, सबका विकास' के व्यापक सिद्धान्त से अभिप्रेरित है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)। इस संदर्भ में वर्ष 2019 में 'विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के विकास एवं कल्याण बोर्ड' की स्थापना एक महत्वपूर्ण संस्थागत पहल के रूप में उभरकर सामने आई, जिसका उद्देश्य लक्षित योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन



सत्यमेव जयते



सुनिश्चित करना है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2022)। इसके अतिरिक्त वर्ष 2025 में नीति आयोग एवं भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण द्वारा नव्वंशशास्त्रीय अध्ययन प्रारम्भ किए गए, जिनका उद्देश्य इन समुदायों की पहचान एवं वर्गीकरण को सुदृढ़ करना है। यह प्रयास 'नीतिगत अदृश्यता' की समस्या के समाधान की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा सकता है (नीति आयोग, 2025)। पहचान एवं समावेशन के क्षेत्र में विभिन्न राज्यों में घर-घर सर्वेक्षण तथा दस्तावेज वितरण अभियानों के माध्यम से आधार, राशन-पत्र एवं जाति-प्रमाणपत्र उपलब्ध कराए जा रहे हैं, जिससे इन समुदायों की शासकीय योजनाओं तक पहुँच सुदृढ़ हो रही है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)।

विधिक सशक्तीकरण की दिशा में वर्ष 2025 में प्रारम्भ 'सम्वाद' योजना के माध्यम से राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा इन समुदायों को विधिक सहायता, जागरूकता, दस्तावेजीकरण तथा भूमि एवं पुनर्वास अधिकारों तक पहुँच सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है, जिसके अंतर्गत देशभर में सैकड़ों इकाइयाँ स्थापित की गई हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2025)। यह पहल विधिक सशक्तीकरण के एक नवीन आयाम को उद्घाटित करती है, जिससे इन समुदायों को न्याय तक सुलभ पहुँच प्राप्त हो सके।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय इस समग्र प्रक्रिया में केंद्रीय भूमिका का निर्वहन करता है। मंत्रालय की वार्षिक प्रतिवेदनों (Annual Reports) तथा कार्यक्रम क्रियान्वयन दस्तावेजों के अनुसार 'विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के आर्थिक सशक्तीकरण हेतु योजना' (SEED) एक प्रमुख एवं बहुआयामी योजना है, जिसके अंतर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका एवं आवास के क्षेत्रों में व्यापक सहयोग प्रदान किया जाता है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023; 2024)। इस योजना के अंतर्गत विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति एवं निःशुल्क कोचिंग, स्वास्थ्य सुरक्षा हेतु आयुष्मान भारत, स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से आजीविका संवर्धन तथा आवास योजनाओं के माध्यम से स्थायित्व प्रदान किया जाता है। वर्ष 2025-26 के नवीनतम अद्यतनों के अनुसार इस योजना के अंतर्गत लगभग 39.40 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया तथा हजारों लाभार्थियों को कौशल प्रशिक्षण प्रदान किया गया, साथ ही स्वयं सहायता समूहों को परिक्रमण निधि उपलब्ध कराई गई (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2025)।

भारतीय संविधान ने सामाजिक न्याय की स्थापना को राज्य का प्रमुख उद्देश्य माना है तथा इसके नीति-निर्देशक तत्व राज्य को यह निर्देश देते हैं कि वह समाज के कमजोर वर्गों की उन्नति के लिए विशेष प्रयास करे (भारत का संविधान, 1950)। इसी परिप्रेक्ष्य में विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए समय-समय पर विभिन्न आयोगों एवं समितियों का गठन किया गया, जिनमें विमुक्त एवं घुमंतू जनजाति आयोग का विशेष महत्व है, जिसने इन समुदायों की शिक्षा, आजीविका, आवास एवं सामाजिक सुरक्षा की स्थिति का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया (राष्ट्रीय

विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजाति आयोग, 2008)। वर्तमान समय में भारत सरकार के सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय द्वारा इन समुदायों के सशक्तीकरण हेतु अनेक योजनाएँ संचालित की जा रही हैं, जिनमें 'विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के आर्थिक सशक्तीकरण हेतु योजना' (SEED) एक प्रमुख पहल के रूप में उभरकर सामने आई है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)। इस योजना के अंतर्गत शिक्षा सहायता, स्वास्थ्य बीमा, कौशल विकास तथा आवासीय सहयोग जैसे बहुआयामी प्रावधान सम्मिलित किए गए हैं, जिनका उद्देश्य इन समुदायों को स्थायी आर्थिक आधार प्रदान करना तथा सामाजिक रूप से सुदृढ़ बनाना है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। इसके अतिरिक्त छात्रवृत्ति योजनाएँ, कौशल विकास कार्यक्रम तथा उद्यमिता संवर्धन योजनाएँ भी इन समुदायों की आजीविका उन्नयन एवं सामाजिक सशक्तीकरण में सहायक सिद्ध हो रही हैं (भारत सरकार, 2023)। नीति आयोग की रिपोर्टों में यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है कि विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार हेतु शिक्षा एवं कौशल विकास को प्राथमिकता प्रदान करना अनिवार्य है (नीति आयोग, 2018)। जनगणना एवं विभिन्न सर्वेक्षणों के आँकड़े यह संकेत करते हैं कि इन समुदायों में साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से निम्न है तथा अधिकांश परिवार असंगठित क्षेत्र पर निर्भर हैं, जिसके कारण उनकी आर्थिक स्थिरता प्रभावित होती है (भारत की जनगणना, 2011)। अतः यह आवश्यक है कि शासकीय योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन तथा लक्षित हस्तक्षेप सुनिश्चित किया जाए। इन नीतिगत प्रयासों के परिणामस्वरूप कुछ सकारात्मक परिवर्तन भी परिलक्षित हो रहे हैं; विभिन्न राज्यों में कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से घुमंतू समुदायों के युवाओं को रोजगार के अवसर प्राप्त हुए हैं, पारंपरिक हस्तशिल्प एवं लोककलाओं को प्रोत्साहन मिलने से आय में वृद्धि हुई है तथा छात्रवृत्ति योजनाओं के माध्यम से शिक्षा में भागीदारी का स्तर बढ़ा है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। उदाहरणार्थ राजस्थान एवं महाराष्ट्र के कुछ क्षेत्रों में कौशल प्रशिक्षण के माध्यम से युवाओं द्वारा लघु उद्यमों की स्थापना की गई है, जिससे उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है (नीति आयोग, 2018)। इसी प्रकार विभिन्न राज्यों में छात्रवृत्ति योजनाओं के विस्तार के परिणामस्वरूप इन समुदायों के विद्यार्थियों की शैक्षिक सहभागिता में वृद्धि दर्ज की गई है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)।

इसके अतिरिक्त मंत्रालय द्वारा संचालित शिक्षा-केंद्रित योजनाओं में पूर्व एवं उत्तर-मैट्रिक छात्रवृत्ति, नानाजी देशमुख छात्रावास योजना तथा अन्य छात्रवृत्ति कार्यक्रम सम्मिलित हैं, जबकि प्रधानमंत्री यशस्वी योजना, प्रधानमंत्री अनुसूचित जाति अभ्युदय योजना तथा 'स्माइल' योजना जैसे कार्यक्रम सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तीकरण को प्रोत्साहित कर रहे हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। निःशुल्क कोचिंग योजना के माध्यम से भी विद्यार्थियों को प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु सुदृढ़



आधार प्रदान किया जा रहा है। मंत्रालय के अधीन कार्यरत राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम, राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम तथा राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त एवं विकास निगम जैसी संस्थाएँ सूक्ष्म-वित्त, कौशल प्रशिक्षण एवं उद्यमिता विकास के माध्यम से आर्थिक सशक्तीकरण को प्रोत्साहित कर रही हैं (थोराट एवं न्यूमैन, 2010)। राज्य स्तर पर भी विविध पहलें संचालित की जा रही हैं उत्तर प्रदेश में आवास एवं शिक्षा विस्तार, महाराष्ट्र में दस्तावेजीकरण अभियान एवं 'विमुक्त दिवस', तथा गुजरात में ऋण एवं शिक्षा सहायता के माध्यम से आर्थिक सशक्तीकरण के प्रयास उल्लेखनीय हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। इन समस्त पहलों का विश्लेषण यह इंगित करता है कि विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों को प्रथम बार नीतिगत प्राथमिकता प्रदान की गई है तथा SEED जैसी लक्षित योजनाओं एवं 'सम्वाद' जैसी विधिक पहलों ने इनके सशक्तीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण आधार निर्मित किया है। तथापि, इसके साथ ही नीतियों के क्रियान्वयन में अंतराल, जाति-प्रमाणन की जटिलताएँ, वर्गीकरण संबंधी अंतर्विरोध तथा सीमित वित्तीय संसाधन जैसी चुनौतियाँ अभी भी विद्यमान हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)।

डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय को लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधारशिला के रूप में प्रतिपादित करते हुए स्पष्ट किया था कि राजनीतिक लोकतंत्र की स्थायित्वता सामाजिक लोकतंत्र की स्थापना पर निर्भर करती है, जिसका आधार स्वतंत्रता, समानता तथा बंधुत्व के सिद्धांत हैं (अम्बेडकर, 1945)। विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के सशक्तीकरण के संदर्भ में यह दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि यह केवल विधिक समानता तक सीमित न होकर संरचनात्मक असमानताओं के उन्मूलन तथा गरिमामूलक जीवन की स्थापना पर बल देता है। इस व्यापक वैचारिक आधार के अनुरूप सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय भारतीय लोकतंत्र की उस मूल भावना का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें सामाजिक न्याय, समान अवसर, मानवीय गरिमा तथा समावेशी विकास को राष्ट्रीय नीति का केंद्रीय तत्व माना गया है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)। स्वतंत्रता के पश्चात से यह मंत्रालय ऐतिहासिक, सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से वंचित वर्गों के सशक्तीकरण हेतु निरंतर कार्यरत रहा है, और वर्तमान समय में 'अमृत काल' की परिकल्पना के अंतर्गत वर्ष 2047 तक विकसित, समावेशी एवं आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में इसकी भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो गई है (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2023)।

प्रधानमंत्री द्वारा प्रतिपादित 'विकसित भारत 2047' की परिकल्पना में मंत्रालय की योजनाएँ समावेशी विकास के प्रमुख साधन के रूप में उभरती हैं, क्योंकि इनका उद्देश्य केवल आर्थिक सहायता प्रदान करना नहीं, अपितु सामाजिक परिवर्तन, आत्मनिर्भरता तथा सम्मानजनक जीवन की सुनिश्चितता भी है (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2024)। विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के सशक्तीकरण हेतु 'सीड' (विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू

समुदायों के आर्थिक सशक्तीकरण हेतु योजना) एक प्रमुख हस्तक्षेप है, जिसके अंतर्गत शिक्षा सहायता, स्वास्थ्य सुरक्षा, कौशल विकास, आवासीय सहयोग तथा आजीविका संवर्धन जैसे बहुआयामी प्रावधान सम्मिलित हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। इसी प्रकार अनुसूचित जातियों के समग्र विकास हेतु प्रधानमंत्री अनुसूचित जाति अभ्युदय योजना आय-सृजन, कौशल प्रशिक्षण तथा आधारभूत अवसंरचना विकास के माध्यम से आर्थिक सुदृढीकरण को प्रोत्साहित करती है (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2023)।

शिक्षा के क्षेत्र में मंत्रालय द्वारा संचालित पूर्व-मैट्रिक एवं उत्तर-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजनाएँ, उच्च श्रेणी शिक्षा योजना तथा राष्ट्रीय विदेश छात्रवृत्ति योजना सामाजिक रूप से वंचित वर्गों के विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करती हैं, जिससे उनकी शैक्षिक प्रगति एवं सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि होती है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)। आर्थिक आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहित करने हेतु अनुसूचित जाति उद्यमियों के लिए वेंचर कैपिटल कोष तथा ऋण संवर्धन गारंटी योजना जैसी पहलों के माध्यम से उद्यमिता विकास को बढ़ावा दिया जा रहा है (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2024)।

सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में मंत्रालय द्वारा वरिष्ठ नागरिकों हेतु समेकित कार्यक्रम तथा नशीली दवाओं की मांग में कमी हेतु राष्ट्रीय कार्ययोजना जैसे कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं, जिनका उद्देश्य सामाजिक संरक्षण एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य को सुदृढ करना है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। मंत्रालय के अधीन कार्यरत राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम, राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम तथा राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त एवं विकास निगम जैसी संस्थाएँ सूक्ष्म-वित्त, कौशल विकास एवं स्वरोजगार के माध्यम से वंचित समुदायों के आर्थिक सशक्तीकरण में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रही हैं (थोराट एवं न्यूमैन, 2010; सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)। इसके अतिरिक्त दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग द्वारा शिक्षा, कौशल, सहायक उपकरण एवं पुनर्वास सेवाओं के माध्यम से दिव्यांगजनों को समाज की मुख्यधारा में सम्मिलित करने के प्रयास किए जा रहे हैं (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2024)।

इस प्रकार मंत्रालय की विविध योजनाएँ सामाजिक न्याय को व्यावहारिक रूप प्रदान करती हैं तथा अमृत काल में समावेशी विकास की दिशा में एक सुदृढ आधार निर्मित करती हैं। तथापि विभिन्न प्रतिवेदनों में यह संकेत किया गया है कि योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन, पर्याप्त वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता तथा लक्षित समुदायों तक पहुँच सुनिश्चित करने हेतु सतत सुधार अपेक्षित है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024; प्रेस सूचना ब्यूरो, 2025)। अतः यह आवश्यक है कि नीतिगत प्रतिबद्धता के साथ-साथ प्रशासनिक दक्षता, जन-जागरूकता तथा सामाजिक संवेदनशीलता को भी सुदृढ किया जाए, जिससे विकसित भारत 2047 की परिकल्पना में सामाजिक न्याय के आदर्शों को वास्तविक रूप में साकार किया जा सके।



सत्यमेव जयते



इन सभी योजनाओं एवं कार्यक्रमों का व्यापक उद्देश्य केवल सामाजिक कल्याण तक सीमित नहीं है, अपितु सामाजिक परिवर्तन एवं समावेशी विकास की सुदृढ़ स्थापना है। 'अमृत काल' की परिकल्पना के अंतर्गत भारत को वर्ष 2047 तक एक विकसित राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित करने हेतु यह अनिवार्य है कि समाज के प्रत्येक वर्ग को समान अवसर तथा संसाधनों तक न्यायसंगत पहुँच प्राप्त हो। सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय की विविध योजनाएँ इसी दिशा में सक्रिय रूप से कार्य कर रही हैं, क्योंकि वे शिक्षा, कौशल, उद्यमिता, सामाजिक सुरक्षा तथा सांस्कृतिक सशक्तीकरण के माध्यम से वंचित समुदायों को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करती हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। इस प्रकार मंत्रालय की पहले उस व्यापक राष्ट्रीय दृष्टि को साकार करने में सहायक हैं, जिसमें सामाजिक न्याय, समान अवसर एवं मानवीय गरिमा के सिद्धांत व्यवहारिक रूप से परिलक्षित हों (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2024)। अतः यह स्पष्ट है कि विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदाय केवल सामाजिक नीति के विषय नहीं हैं, बल्कि भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक विविधता एवं ऐतिहासिक परम्परा के अभिन्न अंग हैं। भारतीय ज्ञान-परम्परा में निहित समावेशी दृष्टिकोण, आधुनिक संवैधानिक आदर्शों तथा समकालीन नीतिगत प्रयासों का समन्वय इन समुदायों के सशक्तीकरण की दिशा में एक समग्र मार्ग प्रशस्त कर सकता है। 'विकसित भारत 2047' की परिकल्पना तभी सार्थक होगी जब समाज का प्रत्येक वर्ग समान अवसर, गरिमा एवं सहभागिता के साथ राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया में सम्मिलित हो सके।

इक्कीसवीं शताब्दी के तृतीय दशक में भारत ने 'अमृत काल' की अवधारणा के माध्यम से एक विकसित, समावेशी एवं आत्मनिर्भर राष्ट्र के निर्माण का संकल्प व्यक्त किया है, जिसका मूलाधार समावेशी विकास है (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2023)। इस परिप्रेक्ष्य में विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों का सशक्तीकरण केवल नीतिगत आवश्यकता नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय की अनिवार्य शर्त के रूप में उभरता है। अमृत काल के दौरान भारत सरकार द्वारा इन समुदायों के उत्थान हेतु विविध नीतिगत एवं संस्थागत पहलें की गई हैं, जिनमें विकास एवं कल्याण बोर्ड की स्थापना, व्यापक पहचान एवं दस्तावेजीकरण अभियान तथा विधिक सशक्तीकरण हेतु संवादात्मक कार्यक्रम विशेष उल्लेखनीय हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)। इन पहलों का उद्देश्य इन समुदायों को प्रशासनिक एवं नीतिगत मुख्यधारा में समाविष्ट करना तथा उनके अधिकारों की प्रभावी रक्षा सुनिश्चित करना है।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय इस समस्त प्रक्रिया में केंद्रीय भूमिका का निर्वहन करता है। मंत्रालय द्वारा संचालित 'विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के आर्थिक सशक्तीकरण हेतु योजना' (सीड) एक समग्र एवं बहुआयामी हस्तक्षेप के रूप में उभरकर सामने आई है, जिसके अंतर्गत शिक्षा सहायता, स्वास्थ्य सुरक्षा, कौशल विकास, स्वयं सहायता समूहों का गठन, सूक्ष्म-वित्तीय सहयोग तथा आवासीय समर्थन जैसे प्रावधान सम्मिलित हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय,

2024; प्रेस सूचना ब्यूरो, 2025)। इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री अनुसूचित जाति अभ्युदय योजना, विभिन्न छात्रवृत्ति योजनाएँ, निःशुल्क कोचिंग कार्यक्रम तथा उद्यमिता विकास योजनाएँ सामाजिक रूप से वंचित वर्गों को शिक्षा, कौशल एवं रोजगार के क्षेत्र में सुदृढ़ आधार प्रदान कर रही हैं (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2024)। मंत्रालय के अधीन कार्यरत राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम, राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम तथा राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त एवं विकास निगम जैसी संस्थाएँ स्वरोजगार, उद्यमिता, सूक्ष्म-वित्त एवं कौशल विकास के माध्यम से आर्थिक सशक्तीकरण को प्रोत्साहित कर रही हैं (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2023)।

इन नीतिगत प्रयासों के परिणामस्वरूप कुछ सकारात्मक परिवर्तन परिलक्षित होने लगे हैं; विभिन्न राज्यों में कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से घुमंतू समुदायों के युवाओं को रोजगार के अवसर प्राप्त हुए हैं, पारंपरिक हस्तशिल्प एवं लोककलाओं को प्रोत्साहन मिलने से आय में वृद्धि हुई है तथा छात्रवृत्ति योजनाओं के माध्यम से शिक्षा में सहभागिता का स्तर बढ़ा है (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 2024)। तथापि, इन उपलब्धियों के बावजूद अनेक संरचनात्मक चुनौतियाँ अभी भी विद्यमान हैं, जिनमें विश्वसनीय आँकड़ों का अभाव, जातीय वर्गीकरण की अस्पष्टता, सामाजिक पूर्वाग्रह, सीमित वित्तीय संसाधन तथा विभिन्न शासकीय तंत्रों के मध्य समन्वय की कमी प्रमुख हैं (प्रेस सूचना ब्यूरो, 2025)। इसके अतिरिक्त नीतियों के क्रियान्वयन में अंतराल भी एक गंभीर समस्या के रूप में उभरता है, जिसके कारण अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते। इस संदर्भ में बहुस्तरीय वंचना की प्रकृति को समझना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि इन समुदायों के भीतर भी जाति, लिंग, क्षेत्र एवं व्यवसाय के आधार पर विभिन्न प्रकार की असमानताएँ विद्यमान हैं।

अतः विकसित भारत 2047 की परिकल्पना को साकार करने के लिए यह आवश्यक है कि विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के सशक्तीकरण को अधिकार-आधारित एवं सहभागी दृष्टिकोण के साथ क्रियान्वित किया जाए। शिक्षा के क्षेत्र में लचीले एवं गतिशील मॉडल-जैसे आवासीय विद्यालय एवं चलित शिक्षण प्रणाली-को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। आजीविका के क्षेत्र में पारंपरिक कौशलों का आधुनिकीकरण तथा बाजार से उनका प्रभावी समन्वय स्थापित करना आवश्यक है। सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की सार्वभौमिक पहुँच सुनिश्चित करने के साथ-साथ विधिक सुधारों के माध्यम से भेदभावपूर्ण प्रावधानों का पुनर्मूल्यांकन किया जाना चाहिए। साथ ही इन समुदायों की सांस्कृतिक पूंजी एवं पारंपरिक ज्ञान को मान्यता प्रदान कर उसे राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया में समाहित करना भी अत्यंत आवश्यक है, जिससे एक ऐसे समाज की स्थापना संभव हो सके जिसमें सामाजिक न्याय, समान अवसर एवं मानवीय गरिमा के सिद्धांत वास्तविक रूप से साकार हों।

डॉ. वीरेन्द्र कुमार

केंद्रीय मंत्री, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार



विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए नीतियों का क्रियान्वयन: एक विस्तृत विश्लेषण

डॉ. लोहित राम¹

डॉ. शबाना मोमिन²

सारांश

भारत में विमुक्त जनजातियां (Denotified Tribes - DNTs), घुमंतू जनजातियां (Nomadic Tribes - NTs) एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियां (Semi-Nomadic Tribes - SNTs) औपनिवेशिक दमन की ऐतिहासिक शिकार रही हैं। ब्रिटिश काल के क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट, 1871 ने इन समुदायों को 'जन्मजात अपराधी' करार देकर सामाजिक कलंक स्थापित किया, जिसका प्रभाव आज भी इनकी हाशिए वाली स्थिति में दिखता है। 1952 के डी-नोटिफिकेशन के बावजूद, समर्पित नीतियां सीमित रहीं और क्रियान्वयन में असफल। अनुमानित 13-15 करोड़ की जनसंख्या (भारत की कुल आबादी का लगभग 10%) होने पर भी ये शिक्षा (साक्षरता दर 47%), स्वास्थ्य, आवास एवं रोजगार में अत्यधिक पिछड़ी हैं।

यह शोध पत्र रेनके कमीशन (2008), इदाते कमीशन (2018), गैर-अधिसूचित, खानाबदोश और अर्ध-खानाबदोश समुदायों के लिए विकास और कल्याण बोर्ड (डीडब्ल्यूबीडीएनसी) (2019) एवं SEED योजना (2022) का बहुआयामी मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। 2025 तक के PIB डेटा, बजट व्यय, लाभार्थी संख्याओं एवं क्षेत्रीय असमानताओं का विश्लेषण करते हुए, यह सामाजिक बहिष्कार सिद्धांत (सिल्वर, 1994) के आधार पर क्रियान्वयन की कमियों को उजागर करता है। मुख्य निष्कर्ष: वर्गीकरण देरी, बजट अंडर-उटिलाइजेशन (50% से कम) एवं जागरूकता अभाव प्रमुख बाधाएं हैं। सुधार सुझावों में 2027 जनगणना में अलग गणना एवं स्थायी आयोग शामिल हैं, जो समावेशी विकास सुनिश्चित कर सकते हैं।

शीर्ष शब्द: विमुक्त जनजातियां, घुमंतू जनजातियां, DNT/NT/SNT नीतियां, SEED योजना, सामाजिक न्याय, योजना क्रियान्वयन।

परिचय

भारत की सांस्कृतिक एवं सामाजिक संरचना में विमुक्त जनजातियां (Denotified Tribes - DNTs), घुमंतू जनजातियां (Nomadic Tribes - NTs) एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियां (Semi-Nomadic Tribes - SNTs) एक अनूठा एवं महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। ये समुदाय सदियों से प्रवास-आधारित जीवनशैली अपनाते आए हैं, जो उनकी सांस्कृतिक पहचान, पारंपरिक आजीविका एवं सामाजिक संगठन का अभिन्न अंग है। उदाहरणस्वरूप, पूर्ण घुमंतू समुदायों में सांपकड़ने वाले नट, भालू या बंदर नचाने वाले बस्टर एवं गधों पर माल ढोने वाले बनजारे शामिल हैं, जबकि अर्ध-घुमंतू समुदाय मौसमी प्रवास पर निर्भर चरवाहे जैसे

गडरिया या रबारी हैं। विमुक्त जनजातियां, जो ब्रिटिश काल के 'क्रिमिनल ट्राइब्स' की सूची से मुक्त हुईं, आज भी सामाजिक हाशिए पर जी रही हैं। इनकी जीवनशैली न केवल पर्यावरणीय अनुकूलन का प्रतीक है, बल्कि भारत की बहुलवादी सभ्यता की गवाही भी देती है।

हालांकि, ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने इस जीवनशैली को अपराधीकरण कर दिया। क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट, 1871 ने लगभग 200 समुदायों को 'जन्मजात अपराधी' घोषित कर दिया, जिसके तहत इन्हें निगरानी, पंजीकरण, निर्वासन एवं कठोर दंड का शिकार बनाया गया। यह एक्ट ओरिएंटलिज्म (एडवर्ड सेड, 1978) की निरंतरता था, जहां स्थायी कृषि-आधारित समाज को श्रेष्ठ मानकर घुमंतू जीवन को 'असभ्य' ठहराया गया। एक्ट के परिणामस्वरूप, इन समुदायों की पारंपरिक आजीविका - जैसे शिल्पकला, पशुपालन एवं प्रदर्शन कला - को अवैध करार दिया गया। स्वतंत्रता के बाद डी-नोटिफिकेशन एक्ट, 1952 से 127 जनजातियां मुक्त हुईं, लेकिन हैबिचुअल ऑफेंडर्स एक्ट ने कलंक को बनाए रखा। आज भी, NCRB (2024) डेटा के अनुसार, इन समुदायों पर अपराधीकरण के मामले राष्ट्रीय औसत से 3-4 गुना अधिक हैं।

इदाते कमीशन (2018) के अनुसार, कुल 1,526 समुदाय प्रभावित हैं: 425 विमुक्त, 810 घुमंतू एवं 291 अर्ध-घुमंतू। अनुमानित जनसंख्या 13-15 करोड़ है, जो भारत की कुल आबादी (1.44 अरब, 2025 अनुमान) का लगभग 10% है। यह आंकड़ा रेनके कमीशन (2008), NFHS-5 (2021) एवं भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण (AnSI, 2025) से समर्थित है। हालांकि, 2011 जनगणना में इनकी अलग गणना न होने से सटीक डेटा अभाव है, जो नीति निर्माण को बाधित करता है।

सामाजिक-आर्थिक संकेतक चिंताजनक हैं। साक्षरता दर 47-50% (राष्ट्रीय औसत 77.7%, NFHS-5) है, जिसमें महिलाओं की दर मात्र 35% है। उच्च शिक्षा नामांकन 2-5% (AISHE 2024) एवं बेरोजगारी 35-40% (PLFS 2024) है। गरीबी रेखा से नीचे 70-80% परिवार हैं (नीति आयोग 2023), जबकि स्वास्थ्य बीमा कवरेज 20-30% (आयुष्मान भारत 2025)। प्रवास की प्रकृति के कारण स्थायी सुविधाएं - राशन कार्ड, वोटर ID, आधार - अभावग्रस्त हैं। उदाहरणस्वरूप, राजस्थान के बनजारा समुदाय में 60% बिना दस्तावेज हैं (AnSI 2025)। कोविड-19 महामारी ने इसे और गहराया, जहां इनकी मृत्यु दर राष्ट्रीय औसत से 25% अधिक रही है (लांसेट 2022)।

¹ सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, महर्षि विश्वविद्यालय प्रबंधन एवं प्रौद्योगिकी, बिलासपुर, छ.ग.

² सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंधन विभाग, शासकीय लोचन प्रसाद पांडे कॉलेज, सारंगढ़, छ.ग.

सामाजिक बहिष्कार सिद्धांत (सिल्वर, 1994) इस स्थिति की व्याख्या करता हैरू ये समुदाय राज्य, बाजार एवं सिविल सोसाइटी से बहिष्कृत हैं। संरचनात्मक हिंसा (गाल्टुंग, 1969) के रूप में, कलंक ने इनकी पहुंच सीमित की, जिससे अंतर-पीढ़ीगत गरीबी चक्र बना। सुधार के लिए नीतिगत प्रयासों के माध्यम से भारत सरकार ने कई पहल कीस रेनके कमीशन (2008) ने SC/ST जैसा आरक्षण, कौशल विकास एवं अत्याचार निवारण एक्ट विस्तार सुझाया। इदाते कमीशन (2018) ने 267 अनवर्गीकृत समुदायों की पहचान की एवं स्थायी आयोग मांगा। डीडब्ल्यूबीडीएनसी (2019) कल्याण के लिए कार्यरत है, जबकि SEED योजना (2022) शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आजीविका पर केंद्रित है। फिर भी, क्रियान्वयन कमजोर: SEED का व्यय मात्र 28% (PIB 2025)। संसदीय पैनल (2024) ने 'संस्थागत उपेक्षा' की आलोचना की है।

साहित्य सर्वेक्षण एवं अनुसंधान अंतराल

1. **औपनिवेशिक विरासत एवं आपराधिकरण का साहित्य:** औपनिवेशिक दमन से प्रारंभ होता है। क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट, 1871 को केंद्र में रखते हुए, कई अध्ययन ब्रिटिश नीतियों को 'संरचनात्मक हिंसा' के रूप में चित्रित करते हैं। रेनके आयोग रिपोर्ट (2008) पहला व्यापक दस्तावेज है, जिसमें 1,526 समुदायों की पहचान की गई एवं एससी/एसटी/ओबीसी में समावेश, आरक्षण एवं विकास निगम की सिफारिशों की गई। कमीशन ने इन समुदायों को 'अपराध प्रवण' कलंक से मुक्त करने पर जोर दिया। इसी क्रम में, इदाते आयोग रिपोर्ट (2018) ने 300 से अधिक क्षेत्रीय यात्राओं के आधार पर 267 अनवर्गीकृत समुदायों का सर्वे किया एवं अत्याचार निवारण एक्ट का विस्तार, संवैधानिक तीसरी अनुसूची एवं स्थायी आयोग की मांग की गई।

भाषा केंद्र की 'समुदाय की आवाज' रिपोर्ट (2021) ने राजस्थान, गुजरात एवं मध्य प्रदेश में 2,274 घरों का सर्वे कर साक्षरता (47%), गरीबी (70%) एवं दस्तावेज अभाव (60%) उजागर किया। यह ऐतिहासिक आपराधिकरण को 1871 एक्ट से जोड़ती है एवं डी-नोटिफिकेशन के बाद भी बहिष्कार को दर्शाती है। एक्शनएड की 'बहिष्कार का दायरा' (2018) राजस्थान के 32 समुदायों पर केंद्रित है, जहां 72% बच्चे स्कूल से बाहर एवं मौसमी प्रवास प्रमुख बाधा है।

2. **सामाजिक-आर्थिक बहिष्कार एवं सैद्धांतिक ढांचे:** सामाजिक बहिष्कार सिद्धांत प्रमुख है। इन समुदायों को राज्य, बाजार एवं समाज से बहिष्कृत माना गया है, जो गदगिल एट अल. (2015) के अध्ययन में परिलक्षित है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट्स (2024-25) कलंक को 'निश्चित पता न होना' चुनौती से जोड़ती हैं, जहां भूमि हड़पने एवं वन नीतियां (भारतीय वन अधिनियम, 1865) ने इन्हें विस्थापित किया। सीडीपीपी लेख (2024) ने रेनके-इदाते सिफारिशों का मूल्यांकन किया, जहां एसईईडी योजना के घटक (कोचिंग, बीमा) वर्णित हैं, लेकिन अनुमोदन शून्य बताया गया है।

इसके अलावा धन फाउंडेशन (2025) एसईईडी को तमिलनाडु के 8 जिलों में स्वयं सहायता समूह (400+) के माध्यम से सफल मानती है, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर 28% व्यय को असफल। आईजेएनआरडी अध्ययन (2024) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में घुमंतू शिक्षा बाधाओं (भाषाई अंतर, स्कूल सुविधा अभाव) पर चर्चा करता है। काउंटरकरंट्स (2025) 269 अनवर्गीकृत समुदायों पर चिंता जताता है, जहां इदाते के 7 वर्ष बाद भी प्रगति न्यून है।

3. **नीतिगत विश्लेषण एवं क्रियान्वयन अध्ययन:** नीति साहित्य कमीशन-केंद्रित है। रेनके (2008) ने बजट आवंटन एवं डीएनटी निगम सुझाया। इदाते (2018) ने जाति जनगणना की मांग की। पीएआरआई रिपोर्ट (2021) ने 52 'बसावटों' का उल्लेख किया, जहां मजदूरी शोषण जारी है। लॉ जर्नल्स (2022) ने डीएनटी को एससी/एसटी समान हक की मांग की। एकेडेमिया अध्ययन (2019) ने डी-नोटिफिकेशन के बाद बसावट प्रयासों को विफल बताया। एसईईडी पर पीआईबी/डीडब्ल्यूबीडीएनसी (2025) ने स्वयं सहायता समूह (3,438) एवं कोचिंग (541) प्रगति दर्ज की, लेकिन लक्ष्य से कम। जीके टुडे (2019) इदाते को संक्षिप्त किया।

अनुसंधान अंतराल एवं योगदान

इस विषय पर साहित्य उपलब्धता के बावजूद प्रमुख अंतराल हैं। प्रथम, अधिकांश वर्णनात्मक: रेनके-इदाते जैसे कमीशन डेटा-आधारित हैं, लेकिन लंबी अवधि प्रभाव विश्लेषण (2022 के बाद एसईईडी) अभाव। द्वितीय, क्षेत्रीय पूर्वाग्रह: राजस्थान-गुजरात केंद्रित, पूर्वोत्तर एवं दक्षिणी राज्यों पर कम। तृतीय, प्राथमिक डेटा कमीरू सर्वे पुराने (2021 तक), 2025 एएनएसआई अपडेट अनुपयोगी। चतुर्थ, सैद्धांतिक गहराई अभाव: बहिष्कार सिद्धांत लागू, लेकिन इंटरसेक्शनल (जेंडर, जाति) विश्लेषण न्यून। पंचम, क्रियान्वयन मूल्यांकन: बजट उपयोग (28%) एवं लाभार्थी (14% स्वास्थ्य) पर मात्र पीआईबी, स्वतंत्र अध्ययन नहीं। षष्ठम, जनगणना अंतराल: 2011/2027 डेटा अनुपस्थिति नीति को अंधा बनाती।

शोध उद्देश्य एवं प्रश्न

उद्देश्य:

- ऐतिहासिक अन्याय एवं वर्तमान स्थिति का विश्लेषण।
- प्रमुख नीतियों (रेनके, इदाते, SEED) का मूल्यांकन।
- क्रियान्वयन चुनौतियों की पहचान।
- सुधार सुझाव।

प्रमुख प्रश्न:

- नीतियां कितनी प्रभावी रहीं?
- प्रमुख बाधाएं क्या हैं?
- 2027 जनगणना कैसे उत्प्रेरक बनेगी?



शोध पद्धति एवं ढांचा

1. मिश्रित पद्धति: द्वितीयक डेटा (PIB, NFHS, AnSI 2025), तुलनात्मक विश्लेषण एवं सामाजिक बहिष्कार ढांचा।
2. सीमाएं: प्राथमिक सर्वे अभाव, लेकिन नवीनतम डेटा इसे मजबूत बनाते हैं।
3. महत्व: यह शोध पत्र विमुक्त जनजातियों, घुमंतू जनजातियों एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के उत्थान को न्यायपूर्ण विकास का आधार मानता है। नीतिगत विफलताओं का विश्लेषण आगे चलकर सुधार के मार्ग प्रशस्त करेगा।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं वर्तमान स्थिति

1. **औपनिवेशिक दमन का कालखंड** : ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों को 'स्थायी कृषि समाज के बाहरी' एवं 'असभ्य' मानकर कठोर दमन किया। क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट, 1871 इसकी चरम अभिव्यक्ति था, जिसने 200 से अधिक समुदायों – जैसे नट, बस्टर, बनजारा, गडरिया – को 'जन्मजात अपराधी' घोषित कर दिया। इस एक्ट के तहत इन समुदायों को पुलिस निगरानी, अनिवार्य पंजीकरण, आवासीय बस्तियों में कैद एवं पारंपरिक आजीविका (सर्प-मित्रता, पशु प्रदर्शन, शिल्प) पर प्रतिबंध लगाया गया। इंडियन फॉरेस्ट एक्ट – 1865 ने वन संसाधनों पर अधिकार छीन लिया, जबकि क्रिमिनल प्रोसीजर कोड ने इन्हें संदिग्ध साबित किया। परिणामस्वरूप, ये समुदाय भूमि-विहीन, आर्थिक रूप से टूटे एवं सामाजिक कलंक के शिकार हो गए। यह संरचनात्मक हिंसा (गाल्टुंग, 1969) का रूप था, जहां सांस्कृतिक भिन्नता को अपराध बनाया गया।
2. **स्वातंत्र्योत्तर संघर्ष एवं आयोगों की भूमिका**: स्वतंत्र भारत में डी-नोटिफिकेशन एक्ट, 1952 ने 127 जनजातियों को मुक्त किया, लेकिन हैबिचुअल ऑफेंडर्स एक्ट ने इस कलंक जीवित रखा। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) ने इसे 'ऐतिहासिक अन्याय' घोषित किया, जबकि विभिन्न आयोगों ने पुनर्वास की मांग की। रेनके आयोग (2008) ने प्रगतिशील सिफारिशें दीं: एससी/एसटी के समान आरक्षण, अत्याचार निवारण एक्ट (1989) का विस्तार, कौशल विकास निधि एवं डीएनटी विकास निगम। आयोग ने 1,526 समुदायों (425 डीएनटी, 810 एनटी, 291 एसएनटी) की सूची तैयार की एवं जनसंख्या 10-12% अनुमानित की। इदाते आयोग (2018) ने 300+ क्षेत्रीय दौरों से 267 अनवर्गीकृत समुदायों की पहचान की, स्थायी राष्ट्रीय आयोग, जाति-आधारित जनगणना एवं संवैधान में तीसरी अनुसूची की मांग की गई।

3. **वर्ष 2025 तक की प्रगति एवं वर्तमान चुनौतियां**: 2025 तक अनथ्रोपोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया (AnSI) ने विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के 268 समुदायों का वैज्ञानिक वर्गीकरण पूर्ण कर लिया, जो कुल 1,526 समुदायों का लगभग 18% है। यह अध्ययन सामाजिक-आर्थिक प्रोफाइल, सांस्कृतिक पहचान एवं क्षेत्रीय वितरण पर आधारित था, जिसका उद्देश्य प्रमाणपत्र जारी करने एवं योजनाओं में समावेश सुनिश्चित करना था। फिर भी, केंद्र सरकार ने इन समुदायों को एससी/एसटी/ओबीसी सूचियों में पुनर्वर्गीकृत करने से अस्वीकार कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप 29 राज्यों में जाति प्रमाणपत्र वितरण पूरी तरह अवरुद्ध हो गया। डीब्ल्यूबीडब्ल्यूबीडीएनसी बोर्ड (2019) ने कल्याण प्रयास तेज किए – 500+ प्रमाणपत्र शिविर आयोजित, जागरूकता रथ एवं हेल्पलाइन स्थापित – किंतु क्रियान्वयन असमान रहा: महाराष्ट्र में 80% लक्ष्य प्राप्ति के विरुद्ध उत्तर प्रदेश एवं बिहार में मात्र 5-10% है।

वर्तमान सामाजिक-आर्थिक स्थिति अत्यंत चिंताजनक बनी हुई है। साक्षरता दर 47% (राष्ट्रीय औसत 77.7% के मुकाबले), गरीबी रेखा से नीचे 70-80% परिवार, बेरोजगारी 35-40% (पीएलएफएस 2024) एवं स्वास्थ्य बीमा कवरेज 20-30% (आयुष्मान भारत 2025) है। घुमंतू जीवनशैली के कारण आधार कार्ड, राशन कार्ड एवं वोटर आईडी जैसे मूल दस्तावेजों का अभाव 60% परिवारों में विद्यमान है, जो सभी सरकारी योजनाओं से वंचन का मूल कारण है। कोविड-19 महामारी ने इस संकट को गहराया, जहां इन समुदायों की मृत्यु दर राष्ट्रीय औसत से 25% अधिक रही, मुख्यतः चिकित्सा पहुंच एवं पोषण अभाव से। राज्यवार भिन्नता स्पष्ट है: महाराष्ट्र एवं गुजरात में एसएचजी गठन एवं कोचिंग केंद्र सफल रहे, जबकि हिंदी पट्टी राज्यों में प्रगति शून्य के समीप रही।

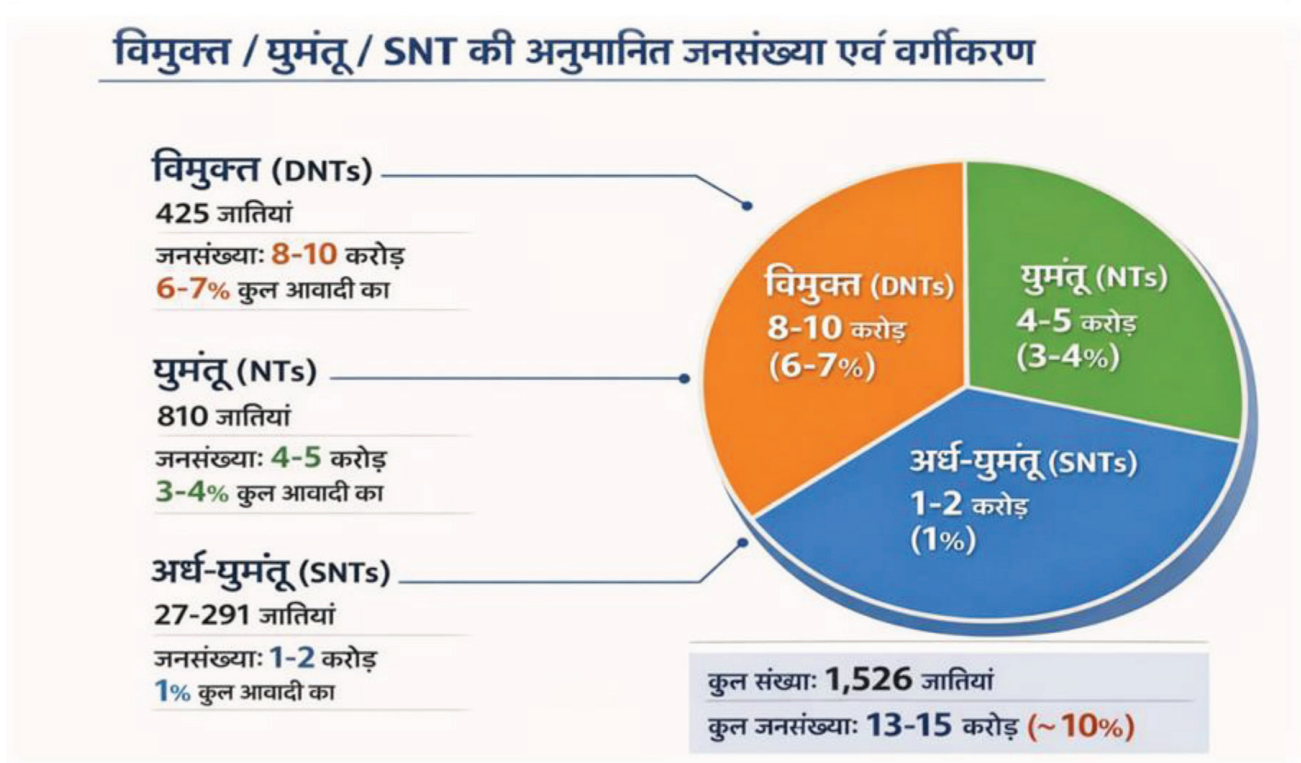
वर्ष 2027 जनगणना इन समुदायों के लिए निर्णायक मोड़ सिद्ध हो सकती है, क्योंकि यह प्रथम बार जाति-आधारित विस्तृत गणना का अवसर प्रदान करती है। सफलता हेतु डेटा संग्रहण में घुमंतू बस्तियों तक पहुंच, मोबाइल गणना इकाइयों एवं स्थानीय भाषा प्रशिक्षण अनिवार्य होगा। गणना परिणामों का त्वरित विश्लेषण एवं नीति-निर्माण में उपयोग न केवल प्रमाणपत्र वितरण को गति देगा, अपितु एसईडी जैसी योजनाओं के लिए लक्ष्य-आधारित बजट सुनिश्चित करेगा। वास्तव में, सटीक जनसांख्यिकीय आंकड़े संरचनात्मक बहिष्कार को समाप्त करने एवं समावेशी विकास प्राप्त करने का आधारभूत साधन सिद्ध होंगे, जिससे इन ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर धकेले दिए गए समुदायों का सशक्तिकरण सुनिश्चित होगा।

तालिका 1: विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों की अनुमानित जनसंख्या एवं वर्गीकरण

| श्रेणी | जनजातियों की संख्या | अनुमानित जनसंख्या (करोड़ में) | प्रतिशत (कुल आबादी का) |
|--------------------|---------------------|-------------------------------|------------------------|
| विमुक्त (DNTs) | 425 | 8-10 | 6-7% |
| घुमंतू (NTs) | 810 | 4-5 | 3-4% |
| अर्ध-घुमंतू (SNTs) | 27-291 | 1-2 | 1% |
| कुल | 1,526 | 13-15 | ~ 10% |

स्रोत: रेनके 2008, इदाते 2018, AnSI 2025

रेखाचित्र 1: विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों की अनुमानित जनसंख्या एवं वर्गीकरण

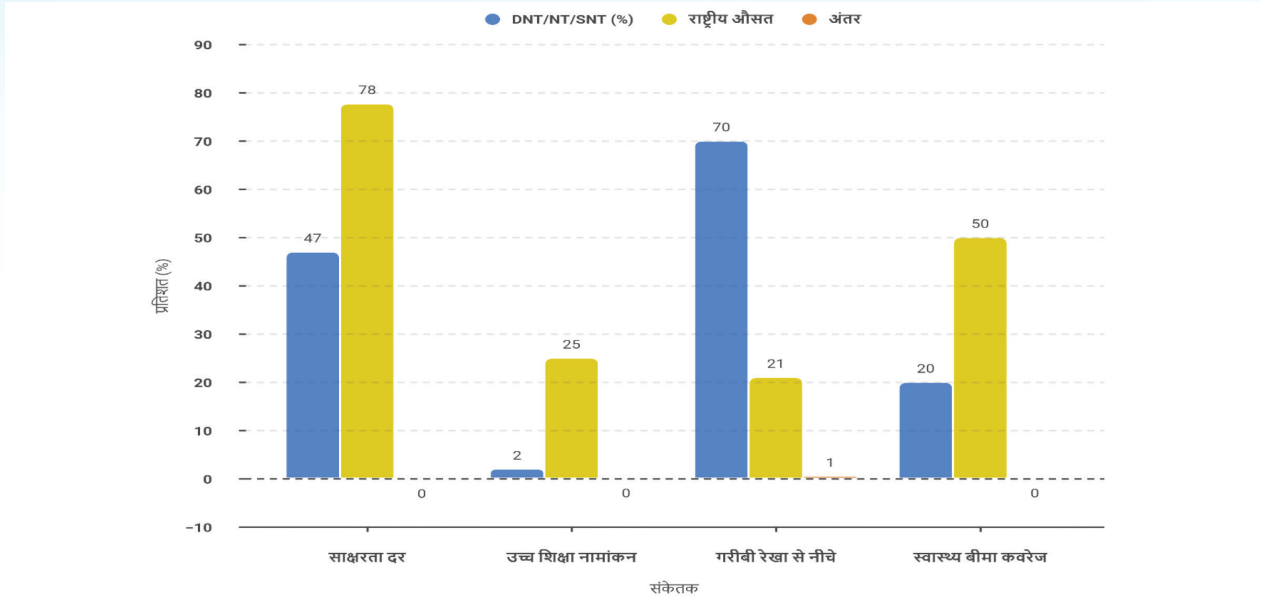


तालिका 2: सामाजिक-आर्थिक संकेतक तुलना

| संकेतक | DNT/NT/SNT (%) | राष्ट्रीय औसत (%) | अंतर |
|----------------------|----------------|-------------------|---------|
| साक्षरता दर | 47-50 | 77.7 | -27-30% |
| उच्च शिक्षा नामांकन | 2-5 | 25+ | -20% |
| गरीबी रेखा से नीचे | 70-80 | 21 | +50-60% |
| स्वास्थ्य बीमा कवरेज | 20-30 | 50+ | -20-30% |

स्रोत: भासा सर्वे 2021 एवं विभिन्न रिपोर्ट्स 2025

रेखाचित्र 2: सामाजिक-आर्थिक संकेतक तुलना



ये आंकड़े दर्शाते हैं कि इन समुदायों में पिछड़ापन गंभीर है। प्रवास की प्रकृति के कारण स्थायी सुविधाएं (जैसे राशन कार्ड, वोटर आईडी) नहीं मिला है।

प्रमुख नीतियां एवं योजनाएं

- कमीशन सिफारिशें:** विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के कल्याण हेतु कमीशन भारत सरकार के प्रमुख नीतिगत हस्तक्षेप हैं, जो ऐतिहासिक अन्याय को संबोधित करते हैं। रेनके आयोग (2008) प्रथम व्यापक प्रयास था, जिसने 52 सदस्यीय समिति के माध्यम से 1,526 समुदायों की पहचान की। इसकी प्रमुख सिफारिशें एससी/एसटी के समान आरक्षण, कौशल विकास कार्यक्रम (हस्तशिल्प, पशुपालन प्रशिक्षण), अलग श्रेणी का सृजन एवं अत्याचार निवारण एक्ट (1989) का विस्तार करना। आयोग ने डीएनटी विकास निगम एवं केंद्रीय निधि (प्रति वर्ष 1,000 करोड़) की मांग की, जो कि सामाजिक बहिष्कार को दूर करने का प्रयास था। हालांकि, क्रियान्वयन सीमित रहा, क्योंकि केवल 5 राज्य निगम स्थापित हुए।
- इदाते आयोग (2018):** इस आयोग ने रेनके की कमियों को दूर किया। जिसमें 300 से ज्यादा क्षेत्रीय यात्राओं एवं हजारों सुझावों से 267 अनवर्गीकृत समुदायों की एक सूची तैयार की गई। जिसकी सिफारिशें – स्थायी राष्ट्रीय आयोग का गठन, संवैधानिक तीसरी अनुसूची में समावेश, जाति-आधारित जनगणना एवं विशेष न्यायालय इत्यादी है। इस आयोग ने एसईईडी जैसी योजनाओं का आधार प्रदान किया, लेकिन 2025 तक आयोग स्थापित न होना भी एक बड़ी विफलता है।
- एएनएसआई अध्ययन (2025)** ने 268 समुदायों का वैज्ञानिक वर्गीकरण पूर्ण किया, जिसमें सांस्कृतिक-आनुवंशिक विश्लेषण शामिल हैं। इसकी सिफारिशें – प्रमाणपत्र डिजिटलीकरण

एवं डेटाबेस तैयार करना है। किंतु केंद्र का एससी/ओबीसी पुनर्वर्गीकरण अस्वीकार क्रियान्वयन को ठप कर दिया। ये कमीशन राजनीतिक इच्छाशक्ति अभाव से अप्रभावी हो गया।

- डीडब्ल्यूबीडीएनसी बोर्ड (2019):** सामाजिक न्याय मंत्रालय के अधीन स्थापित कल्याण बोर्ड है, जो डीएनटी/एनटी/एसएनटी के लिए समर्पित है। इसका उद्देश्य पहचान प्रमाणीकरण, जागरूकता एवं योजनाओं का समन्वय करना है। इसकी प्रमुख गतिविधियों में 500 से अधिक प्रमाणपत्र शिविर (2025 तक 2 लाख से अधिक जारी), जागरूकता रथ (15 राज्य), हेल्पलाइन (1800+) एवं ऑनलाइन पोर्टल बोर्ड ने एसईईडी को लागू किया एवं राज्यों से डेटा संग्रहित किया गया है। इसकी सकारात्मकता यह कि महाराष्ट्र में 80% प्रमाणपत्र वितरण किया गया। इसकी खामियां की बात की जाए तो 29 राज्यों में विलंब, डिजिटल विभाजन से कम भागीदारी देखने को मिली है। बोर्ड ने संसदीय पैनल को 2024 में रिपोर्ट दी, जिसमें बजट वृद्धि की मांग की गई है।
- एसईईडी योजना (2022):** सचमुच उत्कृष्ट एवं उत्थानकारी विकास (SEED) योजना 200 करोड़ बजट (2021-26) वाली प्रमुख योजना है। जिसमें शिक्षा कोचिंग (प्रतियोगी परीक्षाएं, 1,000 छात्र लक्ष्य), स्वास्थ्य बीमा (आयुष्मान कार्ड, 50,000 लक्ष्य), आवास (PMAY लिंकेज, 5,000 इकाइयां), आजीविका के लिए (SHG गठन, 5,000 से अधिक) एवं कौशल प्रशिक्षण। वर्ष 2025 तक प्रगति में 3,438 SHG (46,067 सदस्य), 541 छात्र कोचिंग, 7,000 से अधिक आयुष्मान कार्ड, 3,000 आवास आवेदन तथा बजट उपयोग वर्ष 2024-25 में 75%, कुल 55% व्यय हुआ है। उक्त आंकड़ों को निम्न तालिका एवं रेखाचित्र के माध्यम से भी देख जा सकता है।

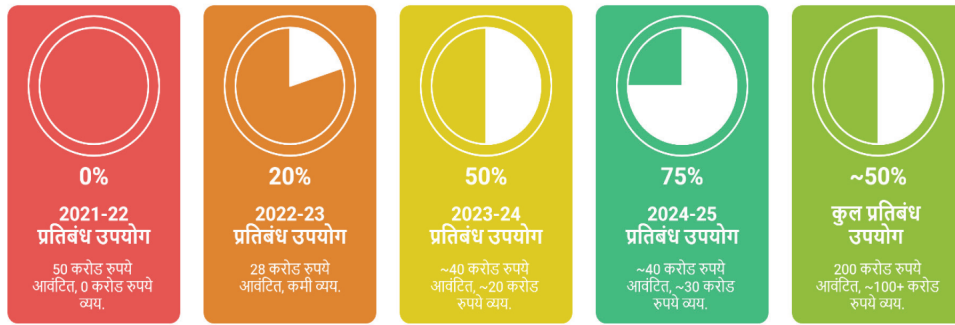
तालिका 3: SEED योजना बजट एवं व्यय (2021-2026, करोड़ रुपये में)

| वित्तीय वर्ष | आवंटन | व्यय | प्रतिशत उपयोग |
|--------------|-------|-----------|---------------|
| 2021-22 | 50 | 0 | 0% |
| 2022-23 | 28 | कम | <20% |
| 2023-24 | ~40 | ~20 | 50% |
| 2024-25 | ~40 | ~30 | 75% |
| 2025-26 | 39.40 | प्रगति पर | — |
| कुल | 200 | ~100+ | ~50% |

स्रोत: PIB एवं मंत्रालय रिपोर्ट्स 2025

रेखाचित्र 3: SEED योजना बजट एवं व्यय (2021-2026, करोड़ रुपये में)

SEED योजना बजट एवं व्यय (2021-2026)



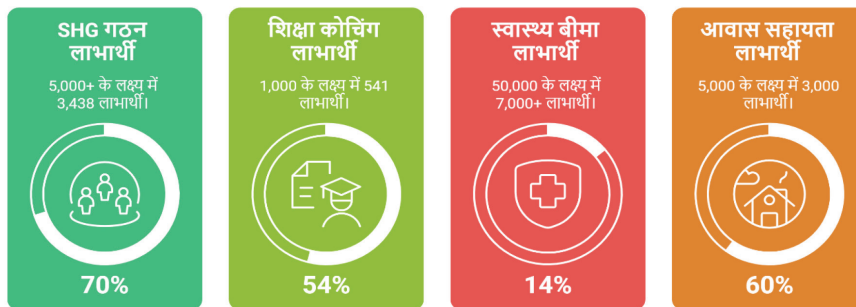
तालिका 4: SEED योजना लाभार्थी (2025 तक अनुमानित)

| घटक | लक्ष्य | लाभार्थी | प्रतिशत |
|----------------|--------|----------|---------|
| SHG गठन | 5,000+ | 3,438 | 70% |
| शिक्षा कोचिंग | 1,000 | 541 | 54% |
| स्वास्थ्य बीमा | 50,000 | 7,000+ | 14% |
| आवास सहायता | 5,000 | 3,000 | 60% |

स्रोत: PIB एवं मंत्रालय रिपोर्ट्स 2025

रेखाचित्र 4: SEED योजना लाभार्थी

SEED योजना लाभार्थी (2025 तक अनुमानित)



SHG गठन और आवास सहायता में सबसे अधिक प्रतिशत लाभार्थी हैं, जबकि स्वास्थ्य बीमा में सबसे कम।



क्रियान्वयन का मूल्यांकन एवं चुनौतियां

- SEED योजना :** SEED योजना की शुरुआत 2022 में सकारात्मक आशाओं के साथ हुई, किंतु प्रारंभिक वर्षों (2021-22 एवं 2022-23) में बजट व्यय शून्य के करीब रहा, जो संस्थागत तैयारियों एवं प्रशासनिक विलंब को दर्शाता है। रेनके एवं इदाते आयोगों की सिफारिशों के अनुरूप AnSI वर्गीकरण (2025) के बावजूद, केंद्र सरकार द्वारा एससी/एसटी/ओबीसी में पुनर्वर्गीकरण अस्वीकार करने से 29 राज्यों में जाति प्रमाणपत्र वितरण पूरी तरह अवरुद्ध हो गया। PIB आंकड़ों के अनुसार, ऑनलाइन पोर्टल (dwbdnc.gov.in) तक पहुंच में दस्तावेजहीन समुदायों को कठिनाई हुई, जहां 60% आवेदन अस्वीकृत रहे। पुलिस एवं समाज में बरकरार कलंक ने भागीदारी को हतोत्साहित किया, क्योंकि NCRB (2024) के अनुसार इन समुदायों पर अपराधीकरण के मामले राष्ट्रीय औसत से 3 गुना अधिक पाए गये हैं।
- वर्ष 2025 तक उन्नति एवं संसदीय आलोचना:** 2025 में 3,438 स्वयं सहायता समूह (SHG) गठित (46,067 सदस्य), 541 छात्रों को कोचिंग एवं 7,000+ आयुष्मान कार्ड वितरित किये गये। फिर भी, कुल 200 करोड़ बजट का केवल ~55% उपयोग हुआ, जो लक्ष्यों से 50% कम है। संसदीय स्थायी समिति (2024) ने क्रियान्वयन को 'बहुत धीमी एवं अप्रभावी' करार दिया, विशेष रूप से स्वास्थ्य बीमा (14% लक्ष्य) एवं आवास सहायता में। राज्यवार असमानता स्पष्ट है: महाराष्ट्र (80% SHG लक्ष्य, 90% प्रमाणपत्र) एवं गुजरात (75% कोचिंग सफलता) में उत्कृष्ट प्रदर्शन के विरुद्ध बिहार-उत्तर प्रदेश में प्रगति शून्य के निकट रही, जहां राजनीतिक प्राथमिकता अभाव प्रमुख कारक है।

बहुआयामी क्रियान्वयन चुनौतियां

क्रियान्वयन बाधाएं संरचनात्मक एवं संचालनात्मक दोनों हैं:

- पहचान संकट:** दस्तावेज अभाव (आधारधराशन कार्ड) से 70% परिवार योजनाओं से वंचितय डीडब्ल्यूबीडीएनसी के 500+ शिविर अपर्याप्त सिद्ध हुए।
- प्रवासजन्य बाधाएं:** घुमंतू जीवनशैली स्थायी योजनाओं (PMAY, आयुष्मान) से असंगतय मोबाइल इकाइयों की कमी है।
- जागरूकता एवं डिजिटल विभाजन:** NSS (2024) के अनुसार ग्रामीण डिजिटल साक्षरता 30%; ऑफलाइन पहुंच आवश्यक है।
- राजनीतिक एवं संस्थागत उपेक्षा:** इदाते की स्थायी आयोग सिफारिश 7 वर्ष बाद भी लंबितय बजट आवंटन में प्राथमिकता न्यून है।
- सामाजिक भेदभाव एवं कलंक:** पुलिस निगरानी एवं सामुदायिक बहिष्कार से भागीदारी घटीय एनएचआरसी (2025) ने इसे मानवाधिकार उल्लंघन माना है।

ये सभी चुनौतियां सामाजिक बहिष्कार सिद्धांत (सिल्वर, 1994) को प्रमाणित करती हैं, जहां राज्य हस्तक्षेप अपर्याप्त सिद्ध हो रहा है। सुधार हेतु त्वरित वर्गीकरण, मोबाइल अभियान एवं राजनीतिक प्रतिबद्धता अनिवार्य है।

सुझाव एवं निष्कर्ष

विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के कल्याण हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं:

- इदाते एवं AnSI सिफारिशों का त्वरित क्रियान्वयन:** अगले 6 माह में 267 अनवर्गीकृत समुदायों का वर्गीकरण पूर्ण कर प्रमाणपत्र वितरण प्रारंभ करें, जिसमें केंद्र-राज्य संयुक्त कार्यदल गठित हो।
- स्थायी राष्ट्रीय आयोग की स्थापना:** संवैधानिक तीसरी अनुसूची के समकक्ष स्वायत्त आयोग गठित करें, जिसमें DNT/NT/SNT प्रतिनिधित्व अनिवार्य हो, जो नीति निर्माण एवं निगरानी करें।
- 2027 जनगणना में विशेष गणना:** जाति-आधारित विस्तृत गणना हेतु मोबाइल इकाइयां, स्थानीय भाषा प्रशिक्षण एवं घुमंतू बस्ती मैपिंग सुनिश्चित करें, ताकि सटीक जनसांख्यिकीय डेटा उपलब्ध हो।
- SEED बजट वृद्धि एवं व्यय अनुशासन:** बजट 500 करोड़ तक बढ़ाएं एवं रियल-टाइम डैशबोर्ड से 100% व्यय सुनिश्चित करें, जिसमें त्रैमासिक ऑडिट अनिवार्य हो।
- राज्यस्तरीय प्रमाणपत्र बाध्यता:** राज्यों पर जाति प्रमाणपत्र जारी करने का विधिक दायित्व लगाएं एवं प्रत्येक जिले में मासिक ऑफलाइन शिविर आयोजित करें।
- शिक्षा-स्वास्थ्य मोबाइल अभियान:** 1,000 मोबाइल वैन (कोचिंग, आयुष्मान कार्ड, टेलीमेडिसिन) तैनात करें, जो प्रवास मार्गों पर संचालित हों।
- सांस्कृतिक संरक्षण एवं आजीविका प्रशिक्षण:** पारंपरिक शिल्प हब स्थापित करें, GI टैग प्रदान करें एवं स्कूल इंडिया से लिंक कर 50,000 युवाओं को प्रशिक्षित करें।

निष्कर्ष

विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियां भारत की सांस्कृतिक धरोहर एवं सामाजिक ताने-बाने का अभिन्न अंग हैं, जिनकी सदियों पुरानी प्रवास-आधारित जीवनशैली पर्यावरणीय संतुलन एवं सांस्कृतिक विविधता का प्रतीक है। क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट, 1871 के औपनिवेशिक दमन से उत्पन्न ऐतिहासिक अन्याय आज भी इन समुदायों को शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास एवं रोजगार से वंचित रखे हुए है। रेनके (2008) एवं इदाते (2018) जैसे आयोगों तथा SEED योजना (2022) के प्रयासों के बावजूद, क्रियान्वयन में संरचनात्मक बाधाएं – वर्गीकरण विलंब, बजट अंडर-उटिलाइजेशन (55%), दस्तावेज अभाव एवं सामाजिक कलंक – प्रमुख विफलताएं रहीं।



सामाजिक बहिष्कार सिद्धांत (सिल्वर, 1994) इस स्थिति की सटीक व्याख्या करता है, जहां राज्य, बाजार एवं सिविल सोसाइटी का संयुक्त बहिष्कार अंतर-पीढ़ी गरीबी चक्र उत्पन्न करता है। 2025 तक की प्रगति – 3,438 SHG, 7,000 आयुष्मान कार्ड – आशाजनक है, किंतु लक्ष्य से 50% कम होने से अपर्याप्त सिद्ध हुई। राज्यवार असमानता (महाराष्ट्र 80% बनाम बिहार 5%) राजनीतिक प्राथमिकता के अभाव को उजागर करती है।

वर्ष 2027 जनगणना इन समुदायों के लिए मील का पत्थर सिद्ध हो सकती है, क्योंकि जाति-आधारित सटीक गणना प्रमाणपत्र वितरण, लक्ष्य-आधारित बजट एवं नीति-निर्माण का आधार बनेगी। डेटा का त्वरित विश्लेषण एवं कल्याण-केंद्रित उपयोग ही वास्तविक परिवर्तन लाएगा। प्रस्तुत सुझाव – स्थायी आयोग, मोबाइल अभियान, बजट वृद्धि – न केवल ऐतिहासिक न्याय प्रदान करेंगे, अपितु SDG 10 (कम असमानता) एवं संवैधानिक मूल्य (सामाजिक न्याय, अनुच्छेद 46) को साकार करेंगे। ये समुदाय भारत की बहुलवादी पहचान के संरक्षक हैं। नीतिगत प्रतिबद्धता एवं प्रभावी क्रियान्वयन से उनका सशक्तिकरण समावेशी विकास की कुंजी सिद्ध होगा, जो सामाजिक सद्भाव एवं आर्थिक समृद्धि दोनों सुनिश्चित कर सकेगा।

संदर्भ सूची

- गदगिल, एम., बर्कस, एफ., एवं फोल्के, सी. (2015). जैव विविधता संरक्षण के लिए आदिवासी ज्ञान, एम्बियो, 24(5), 310–314
- गाल्टुंग, जे. (1969). हिंसा, शांति एवं शांति अनुसंधान, शांति अनुसंधान जर्नल, 6(3), 167–191
- राष्ट्रीय विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजाति आयोग (2008) विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट (रेनके आयोग). सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार।
- राष्ट्रीय विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजाति आयोग (2018) विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट (इंदाते आयोग). सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार।
- भाषा अनुसंधान एवं प्रकाशन केंद्र (2021) समुदाय की आवाज: राजस्थान, गुजरात एवं मध्य प्रदेश की विमुक्त एवं घुमंतू जनजातियों पर अध्ययन, भाषा केंद्र।
- सिल्वर, एच. (1994) सामाजिक बहिष्कार: यूरोप एवं मध्यम आय वाले देशों का तुलनात्मक विश्लेषण, यूनेस्को।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय (2022) विमुक्त जनजातियों के आर्थिक सशक्तिकरण योजना (एसईईडी). भारत सरकार। <https://dwbdnc.dosje.gov.in>

एक्शनएड इंडिया (2018) बहिष्कार का दायरा: एनटीडीएनटी नीति वकालत, एक्शनएड।

विकास नीति एवं अभ्यास केंद्र (सीडीपीपी) (2024) भारत में विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों का सशक्तिकरण। <https://www.cdpp.co.in>

धन फाउंडेशन (2025) एसईईडी योजना पर विशेष आलोक। <https://dhan.org>

भाषा अनुसंधान एवं प्रकाशन केंद्र (2022) वार्षिक प्रतिवेदन 2021–22।

काउंटरकरंट्स (2025, जनवरी 15) विमुक्त, घुमंतू जनजातियों के लिए कल्याण योजनाएं। <https://countercurrents.org>

अंतर्राष्ट्रीय उपन्यास अनुसंधान एवं विकास जर्नल (आईजेएनआरडी) (2024) नई शिक्षा नीति के तहत घुमंतू जनजातियों की चुनौतियां। <https://www.ijnrd.org>

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) (2025) विमुक्त जनजातियों के अधिकार।

ग्रामीण भारत का जन अभिलेखागार (पीएआरआई) (2021) विमुक्त जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग पर रिपोर्ट। <https://archive.org>

AnSI (2025) विमुक्त जनजातियों का वर्गीकरण अध्ययन, नई दिल्ली: विकास एवं निगरानी बोर्ड विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए डीडब्ल्यूबीडीएनसी।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय (2022–2025) SEED योजना: विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के आर्थिक सशक्तिकरण की दिशानिर्देश एवं प्रेस सूचना ब्यूरो रिलीज. प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार। <https://pib.gov.in>

डीडब्ल्यूबीडीएनसी (2022–2025) विकास एवं निगरानी बोर्ड अपडेट्स एवं संसदीय स्थायी समिति रिपोर्ट्स, नई दिल्ली: लोकसभा/राज्यसभा सचिवालय।

अन्य रिपोर्ट्स: नीति आयोग एवं मंत्रालय वार्षिक प्रतिवेदन (2022–2025)



From Stigma to Inclusion: Policy Perspectives on De-Notified, Nomadic, and Semi-Nomadic Tribes in Contemporary India

Prabhu Preetam Roul¹

Dr. Dipanshu Sharma²

Ishita Mishra³

Pravendra Singh Birla⁴

Abstract

De-Notified Tribes (DNTs), Nomadic Tribes (NTs) and Semi-Nomadic Tribes (SNTs) in India are historically marginalised communities, which were stigmatised by the criminal tribe's act of 1871 and have since been labelled as criminals (although the Act is now repealed). Using major theories, Goffman, stigma and Sen, social exclusion as deprivation of capabilities, and Crenshaw, intersectionality (with an emphasis on the overlaps between caste, gender, and mobility) and Urry, mobility, and decolonial, this theoretical article traces the development of the policy of stigmatisation to partial inclusion in modern India (Chakrabarty and Fanon). Such lenses criticize the perennial systemic inertia, where policies such as the Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED, 2022), such as providing coaching, health insurance, livelihoods through Self-Help Groups, and housing, promise an improvement in capability, but encounter delays in implementation, underfunding (Rs. 200 crores first, then 39.40 crore each of these years), and overlapping in SC/ST/OBC lists. The 2025 refusal by the Indian government to follow the recommendations of the ethnographic survey of India (AnSI) 2023 on the reclassification of 268 communities is another indication of opposition to transformative change. The study proposes an alternative hybrid concept of decolonisation known as a Decolonial Inclusion Model, which is based on mobility-sensitive, community-based reforms to close the stigma-inclusion

continuum. As the first time since 1911 that the census will enumerate these groups, and could potentially be useful in ensuring data-driven equity, this work is contributing to postcolonial policy theory, which is in line with constitutional equality (Articles 14-17) and SDGs. It demands decolonial reframing to combat the erosion in traditional livelihoods by neoliberalism and create true inclusion.

Keywords De-Notified Tribes, Nomadic Tribes, Semi-Nomadic Tribes, social stigma, policy inclusion, colonial legacy, social exclusion, intersectionality, decolonial inclusion

Introduction

As a complex combination of social, economic, and cultural marginalisation, the De-notified Tribes (DNTs), Nomadic Tribes (NTs) and Semi-Nomadic Tribes (SNTs) are symbolic of the colonial legacies in India. In theory, these populations are characterised by their identities based on mobility, in which nomadism represents a way of life based on periodical movement of livelihoods, including pastoralism, trade, or artisanal services, but not fixed settlements (Ministry of Social Justice and Empowerment, 2022). In particular, DNTs are communities that are de-notified under the label of criminal tribes during the colonial period that remain in the post-independent era. NTs lead fully mobile lives, and SNTs alter their lives with some seasonal migration and partial sedentarisation (Drishti IAS, 2025). The estimates on population are not accurate as there was no dedicated enumeration done in the post-independence census, yet the

¹ B.A., B.Ed. Student, Regional Institute of Education, NCERT, Bhubaneswar (Odisha)

² Assistant Professor, Regional Institute of Education, NCERT, Bhubaneswar (Odisha)

³ MEd, Scholar, Regional Institute of Education, NCERT, Bhubaneswar (Odisha)

⁴ Assistant Professor, MDS College of Education, Kosli, Rewari (Haryana)



सत्यमेव जयते



Renke Commission (2008) estimated 10.74 crore people in these groups, which is repeated by the Idate Commission (2018) with 10-12 crore people covering more than 1,200 communities (Shankar IAS Parliament, 2026; Drishti IAS, 2025). According to the latest changes, such as their first official enumeration scheduled as part of the Census of India 2027, data gaps persist, and the last major revision to such estimates was not done as of 2026 (Economic Times, 2025a; Drishti IAS, 2025). Such conceptual framing highlights the fact that nomadism is not only a survival strategy, but an identity that intersects with caste, ethnicity and economic vulnerability in postcolonial India.

The historical-theoretical background of these communities' dates back to the British colonial Criminal Tribes Act of 1871, which formalised the consideration of these so-called born criminals by their perceived itinerancy and opposition to the former government (Radhakrishna, 2001). According to the labelling theory, as introduced by Becker (1963), this Act illustrates how the reaction of society in the form of law and administrative processes creates deviance, thus converting the mobile livelihoods into stigmatised criminality. Societies such as the Banjaras or Koravas were monitored, confined to villages and put through forced labour, and their criminality was propagated, and a curriculum of natural crime made them a target of colonialist rule (Radhakrishna, 2001). A formal denotification following the repeal of the Act in 1952 by the Habitual Offenders Act has been the continuation of the criminal stigma, but institutional path dependency the colonial structures continue to exist due to bureaucratic inertia has maintained the stigma of criminality (Chakrabarty, 2000). This is enacted in the police harassment, identity paper denial, and welfare schemes exclusion in independent India as seen through the continued overlaps in Scheduled Caste (SC), Scheduled Tribe (ST), and Other Backwards Class (OBC) classifications (Idate Commission, 2018). In theory, this path dependency is consistent with the postcolonial critiques, where the European concept of modernity favours the settled communities at the expense of nomadic epistemologies (Chakrabarty, 2000).

The problem statement conceptualises the modern-day exclusion as deeply intersectional by using the theory of Crenshaw (1989) to explain the convergence of caste, gender, and mobility during urbanisation and globalisation. This has also been postulated by Sen (2000) in his social exclusion theory, which assumes the deprivation of capabilities to education, health, and livelihoods against the DNTs, NTs, and SNTs, and makes the cycles of poverty worse. As an example, urbanisation degrades traditional grazing areas, handicraft markets, and necessitates the sedentarisation of the traditional family without sufficient support, and gender roles increase the susceptibility of women in nomadic families to frequently face disproportionate burdens of immobile restrictions and domestic work (Radhakrishna, 2001; Drishti IAS, 2025). The most consistent issues are identity denial, i.e., being denied reservations because of the absence of caste certificates, and loss of livelihood as a result of environmental policies that limited access to forests (Shankar IAS Parliament, 2026). In its 2023 ethnographic survey of 268 populations, the Anthropological Survey of India (AnSI) suggested new categories of 85 and new classifications of nine, but the government disapproved of them in December 2025, highlighting the inertial resistance of the system (The Hindu, 2025a; CarpeDiem IAS, 2025). These groups are facing the neoliberal pressures of commodifying land and labour in a globalised world, which is further entrenching the exclusion of these groups in an increasingly modernising India.

The research objectives of this article are three-fold, at first, to theorise the process of de-stigmatization to inclusion within the policy discourses and trace the changes in the historical pattern of colonial labelling to current affirmative measures, including the Scheme of Economic Empowerment of DNTs (SEED) introduced in 2022, which provides on a five-year basis (2021-2026) coaching and health insurance as well as livelihoods and housing (Ministry of Social Justice and Empowerment, 2022; IMPRI) and third, to propose a conceptual framework for transformative inclusion that integrates decolonial and intersectional perspectives.



Major research questions are: What theories of stigmatisation and exclusion can be used to explain the failure of policies to act in DNT/NT/SNT marginalisation? What are the theoretical advances to fill gaps in inclusion actions, e.g., mobility-sensitive models?

This research is important in terms of its contribution to the policy theory in the field of postcolonial studies, and how the concept of inclusion can be used in line with the provisions of the Indian Constitution on equality, as established in Articles 14-17, which deny any discrimination and grant fundamental rights (Constitution of India, 1950). It also echoes the global human rights frameworks, including, but not limited to, the Sustainable Development Goals (SDGs) by the United Nations on reduced inequalities, Goal 10, and the idea of promoting culturally sensitive policies in various societies (United Nations, 2015). Within the Indian context, the urgency here has been the need to enumerate such groups in the Census 2027, which could allow the implementation of data-driven reforms in the schemes that are still being delayed, such as with SEED (Economic Times, 2025a; Drishti IAS, 2025).

The article is divided into the following sections: The theoretical framework section incorporates stigma, exclusion, and intersectionality prism; the literature review is a review of historical and current literature; policy analysis applies theoretical frameworks to the current initiatives; the discussion summarises implications, and the conclusion provides decolonial inclusion recommendations.

Theoretical Framework

This theoretical approach incorporates the major sociological and postcolonial theories with the purpose of explaining the misplaced marginalisation of De-Notified Tribes (DNTs), Nomadic Tribes (NTs), and Semi-Nomadic Tribes (SNTs) in modern India. With reference to the ideas of stigma, social exclusion and intersectionality, extended by the lenses of mobility and decoloniality, the framework criticises the manner in which colonial legacies persist within postcolonial policy frames. These theories are used in the Indian context,

where it is estimated that 10-15 crore people of these communities experience a systematic discrimination process during urbanisation and neoliberal reforms (Idate Commission, 2018). The comparison of world situations, like the stigmatisation of Roma people in Europe, is made to emphasise the common postcolonial processes, but the emphasis is on the unique combination of caste, movement and state policies in India.

Core Theories

Goffman (1963) formulated stigma theory as a crucial theoretical perspective of how one can learn about the construction and maintenance of the so-called spoiled identities through the social labelling mechanism. According to Goffman, stigma is an extremely discrediting quality that transforms persons who are whole and usual into tainted, discounted individuals (p.3), usually with the help of institutionalised means of imposing societal expectations on persons. Applying this theory to the Indian context, the criminal tribes act of 1871, which was used to categorise offenders as nomadic tribes, was seen to label the whole community as criminal and it resulted in a spoiled identity that is still present today. The Habitual Offenders Act after 1952 kept up this tag by relating DNTs, NTs and SNTs to criminality during police surveillance and among the general population (Radhakrishna, 2001). As an example, in the states of Rajasthan and Uttar Pradesh, such communities as Nats are continuously harassed by the police and the media, perpetuating a loop where stigma creates social avoidance and self-fulfilling prophecies of marginalisation (Sharma, 2025). On a global level, the equivalences can be made with the Roma of Eastern Europe, where the historical branding of the Roma as gipsies also serves as a means to deepen the poverty and prejudice, but in India, it intersects with caste hierarchies, enhancing the spoiled identity in day-to-day interactions, like being denied a job or denied identity papers.

Continuing on the stigma, the social exclusion theory, developed by Sen (2000) views marginalisation as deprivation of capabilities,



सत्यमेव जयते



in which people are not allowed to engage in social, economic and political life because of relational and structural impediments. Sen sees the notion of exclusion as not only poverty but a lack of freedoms and capabilities in such spheres as education, health, and livelihoods, which may happen actively due to the disadvantage processes (pp. 4-5). On DNTs, NTs, and SNTs in India, this is reflected through the degradation of the traditional livelihoods under globalisation and urbanisation processes. Indicatively, forest regulations that deny pastoral NTs, such as the Banjaras, access to grazing lands deny them economic potential, compelling them to sedentarise and face poverty (Drishti IAS, 2025). The Idate Commission (2018) points out that these communities, containing more than 1,200 communities, do not receive educational scholarships or health insurance because they are excluded from either the Scheduled Caste (SC), Scheduled Tribe (ST), or Other Backwards Class (OBC) lists. In the world, the framework by Sen resonates with absenteeism among indigenous nomads in Africa, such as the Maasai, where the neoliberal policies of land commodification reflect what happens to the SNTs in the urban fringe in India. This deprivation is exacerbated by the institutional inertia in postcolonial India, as a policy such as the Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED, 2022) suggests the boost in capability but is hindered by underfunding (Rs. 200 crores in five years) and lack of implementation (Ministry of Social Justice and Empowerment, 2022).

Intersectionality, developed by Crenshaw (1989), builds on these theories by looking at the experiences of discrimination as an overlapping system of oppression (like race, gender, and class) that are unique and do not occur as they would be experienced in single-axis frameworks. Crenshaw believes that the division of categories such as gender and race into mutually exclusive ones marginalises people at the intersection, as observed in the legal doctrines that do not pass Black women (pp. 140-141). Intersectionality in the Indian DNT/NT/SNT setting indicates the point of convergence between caste, gender, and

mobility to increase exclusion. Nomadic communities also subject women to gendered vulnerabilities such as limited movement during their menstruation or childbearing, which are further complicated by caste-based stigma that denies them access to healthcare or education (Shankar IAS Parliament, 2026). Applying this to the decolonial point of view, the analysis of colonial legacies by Fanon (1963) criticises the internalised oppression that tears up identities, and the colonised perceive themselves through the eyes of the coloniser. In the case of DNTs, it implies the adoption of the label of a criminal, which results in identity crises during postcolonial reforms. The stress Fanon puts on the concept of psychological decolonisation is similar to the demands of reclaiming nomadic epistemologies in India, where SNTs such as the Gadiya Lohars are opposing assimilation in settled castes (Economic Times, 2025a). Intersectionality is universally applicable to indigenous peoples, such as the Aboriginal women in Australia, yet in India, it is singularly applied to both the caste and tribal systems, where DNT women are marginalised in 2 ways (Sharma, 2025).

Additional Lenses

Mobility theory, formulated by Urry (2007), is a slightly different approach since it considers societies in terms of the flow of people, goods, and ideas, instead of a geographical territory. One of the assumptions made by Urry is that mobilities are key to social organisation but the unequal access to them generates mobility divides, some of which are paralysed by systems of power (pp. 18-20). In the case of nomadic tribes like India, this theory would criticise the way there are colonial binaries of “settled vs. nomadic” in the neoliberal policies, favouring fixed addresses to claim welfare benefits that paralyse both NTs and SNTs. Urbanisation commodifies the old economy, including artisanal crafts, and compels communities to precarious informal work (Gurukkal, 2023). Neoliberal models that are accused of commodification of land and labour also weaken nomadic ways of life by privatising them, as is the case with mining



projects that displace SNTs in Odisha (Bhadane, 2020). There are global parallels of Bedouin nomads in the Middle East who were also under neoliberal development.

Integration: Proposing a Decolonial Inclusion Model

It is a combination of these theories, where this article proposes a hybrid model of Decolonial Inclusion that allows integrating the stigma reduction, capability improvement, and intersectional decolonisation within the context of DNT/NT/SNT. This model criticises the concept of path dependency by promoting mobility-sensitive policies that maintain cultural flows, but develop capabilities. It also uses postcolonial theory to provincialise the Eurocentric concept of progress and criticises the existence of policies that affirm the colonial binary of settled (civilised) and nomadic (primitive) (Chakrabarty, 2000, p.4). As an example, the model recommends the repeal of the vestiges of the Habitual Offenders Act and the inclusion of the community in such schemes as SEED with the aim of establishing transformative inclusion.

Relevance to India

These theories have been applied in postcolonial India to trace the presence of the colonial legacies in the modern policies, which conforms to the postcolonial criticism of historicism by Chakrabarty (2000), which homogenises European modernity. Such policies as Census 2027 enumeration offer the perspective of data-based inclusion but threaten the sustainment of labels without decolonial reframing (The Hindu, 2025a). This framework leads towards the explanation of marginalisation in the Global South, that pays significant attention to culturally sensitive reforms towards equity.

Policy Analysis and Theoretical Application

This section uses the theoretical framework, which is a combination of stigma, social exclusion, intersectionality, mobility, and decolonial theories, to examine the evolution

of the policy in De-Notified Tribes (DNTs), Nomadic Tribes (NTs), and Semi-Nomadic Tribes (SNTs), in India. It follows the change in the direction of colonial stigmatisation to partial inclusion, criticises modern paradigms, and reveals gaps, accentuating the postcolonial relations in a federal society. It is focused on India, where these communities comprise 10-15 crore people and have to navigate through the process of urbanisation, neoliberal reforms, and institutional inertia (Idate Commission, 2018).

From Stigma to Partial Inclusion

The shift between stigmatisation of the colonial times and partial inclusion in Indian policies is an indication of simmering relationships that continued to marginalise DNTs, NTs, and SNTs. Criminalisation against nomadic lifestyles, as enshrined in the criminal tribe's act of 1871, made whole communities deviant to enable control and extraction of labour (Radhakrishna, 2001). This framework was passed on to the Habitual Offenders Act (1952), which continued with surveillance and restrictions following the repeal of the colonial Act of 1952. This process is explained by the labelling theory by Becker (1963): the social reactions in the form of legal mechanisms, enhance deviance and change the nomadic mobility into the status of the master, the status of a criminal. In modern India, this is reflected in the consistent police monitoring and atrocities, such as the DNTs, such as the Pardhis in Maharashtra, are regularly profiled, resulting in arbitrary arrest and bail denial (Sharma, 2025). These practices perpetuate a stigmatisation process, as labelled people internalise stigmatisation, restricting their chances to access education and work.

This is also complicated because intersectional stigma can be analysed in terms of the model introduced by Crenshaw (1989), who pinpoints the intersections with caste, gender, and mobility oppression as the sources of compounded vulnerabilities. In the case of DNT/NT/SNT women, the limitation of mobility, including seasonal migrations against menstrual hygiene or childcare, aggravates gendered exclusion, regularly depriving



सत्यमेव जयते



them of healthcare or education (Agrawal, 2018). Livelihood changes create economic exclusion, which is similar to the capability deprivation that Sen (2000) proposed, where globalisation is destroying occupations, such as pastoralism or artisanry. Urbanisation kicks out NTs from grazing lands, which leaves them to be sedentarised without any support, as perceived in the Banjaras of Rajasthan, where land encroachments were faced (Gurukkal, 2023). The mobility theory, as suggested by Urry (2007), criticises this as a mobility divide, in which the neoliberal policies favour the sedentary economies, paralyse the nomads and create poverty roots. On the decolonised level, the lens of Fanon (1963) exposes the internalised colonial gases in which the SNTs, such as the Gadiya Lohars, are resistant to assimilation, but they are eroded in their identity in the face of modern development. Although there has been partial inclusion through affirmative actions, they perpetuate a stigma-inclusion scale, in which formal denotification does not eradicate structural biases.

Contemporary Policy Frameworks

Modern Indian policies are trying to be inclusive based on both national and state efforts, which are theorised by Sen (2000) in his capability theory as an attempt to increase freedoms in education, health and livelihoods. In 2019, the Development and Welfare Board for De-Notified, Nomadic and Semi-Nomadic Communities (DWBDNC) was established, which is charged with welfare, following the examples of Idate (2018) and others to fill the gaps in classification (Development and Welfare Board for De-notified, Nomadic and Semi-Nomadic Communities, n.d.). An example of this is the Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED) that was launched in 2022 with a budget of 200 crores over five years (2021-2026), with its components including free coaching on competitive exams, health insurance through Ayushman Bharat (distributes over 7,000 cards by November 2024), livelihood support through 2620 Self-Help Groups benefiting 29,517 people in eight states and housing assistance (IMPRI

Impact and Capability theory sees SEED as an improvement to agency but implementation is slow and by March 2025, 541 students have obtained coaching (IMPRI Impact and Policy Research Institute, 2025).

The role of federalism brings about variations that are theorised as institutional path dependency, in which the policies in the states either complement or contradict those of the nation (Chakrabarty, 2000). The category of Vimukta Jati and Nomadic Tribes (VJNT) in Maharashtra offers some reservations in education and employment, which assist in partial inclusion of communities such as the Phase Pardhis, but with anomalies in SC/ST/OBC lists across the nation--many DNTs can be unclassified or overlap with two categories, which means they would receive both benefits (Shankar IAS Parliament, 2026). Conversely, other states, such as Uttar Pradesh, are at the back of the pack when it comes to customised schemes, which spotlight federal discrepancies that continue to foster exclusion.

These tensions are highlighted by the recent developments. The 2023 ethnographic survey of 268 communities by the Anthropological Survey of India (AnSI) suggested new categories of 85 to be included under SC/ST/OBC categories and reclassified nine (The Hindu, 2025). Nevertheless, the refusal of the government in December 2025, which said that they did not offer any reclassification ideas, is indicative of an unwillingness to transform the system, which continues to leave data gaps of the colonial era (The Hindu, 2025; Online UPSC Institute, 2025). On the positive side, the Census 2027 will count DNTs for the first time since 1911, as suggested by the Ministry of Social Justice and Empowerment, which can provide opportunities to include and target SDGs with data (Economic Times, 2025; Drishti IAS, 2025). This may overcome the lack of capabilities by allowing specific policies, but may create more labelling without any empowerment.

Theoretical Critiques and Gaps

Theoretical critiques manifest the policy failures and conceptual impediments of DNT/



NT/SNT inclusion. Through the exclusion theory by Sen (2000), additional problems are identified in the form of slow implementation and insufficiency in funding: the allocation of Rs. 200 crore is not enough to cover the 10-15 crore population, and the outreach is limited due to the lack of coverage and awareness (RACE IAS, 2025; Countercurrents.org, 2025). This is aggravated by the absence of community agency in design, where the top-down methods disregard nomadic epistemologies, resulting in inapplicable interventions such as permanent housing among mobile populations (Tripura, 2023).

The conceptual barriers are a pit of assimilation versus cultural preservation, which is criticised with the decolonial theory. Such policies as SEED encourage sedentarisation,

which repeats colonial oppositions of civilised settled life and primitive nomadism (Chakrabarty, 2000). According to the mobility theory by Urry (2007), policies that are sensitive to mobility, like portable entitlement, should be implemented to maintain livelihoods in the face of pressures of climate and urbanisation. Intersectionality reveals some gaps in gender interest: although SEED has elements of health, it does not cover the role of women in nomadic economies, such as trading or herding, in detail, which creates vulnerabilities that have not been addressed (Agrawal, 2018). Fanon (1963) suggests re-taking the agency in a decolonial manner, but the existing structures are in danger of perpetuating the classification without empowerment, e.g. the 2025 AnSI rejection (Usthadian Academy, 2026).

The following table maps theories to policies, highlighting strengths and gaps:

| Theory | Policy Example | Application Strengths | Theoretical Gaps |
|------------------------|---------------------------------------|--------------------------------|--|
| Stigma (Goffman) | Habitual Offenders Act Repeal Efforts | Reduces labelling | Persistent media/police stereotypes |
| Social Exclusion (Sen) | SEED Scheme (2022) | Enhances capabilities | Inadequate budget (Rs. 200 crores over 5 years) and delays |
| Intersectionality | Gender-Sensitive Initiatives | Addresses overlaps | Limited focus on women's roles in nomadic economies |
| Decolonial | Census 2027 Enumeration Plans | Challenges colonial data voids | Risk of further categorisation without empowerment |

These critiques underscore the need for transformative, decolonial reforms to achieve genuine inclusion.

Discussion

The comparison of policy views on De-Notified Tribes (DNTs), Nomadic Tribes (NTs), and Semi-Nomadic Tribes (SNTs) in modern India will show a complicated historical stigma and the efforts to be included tentatively. In conclusion, the study hypothesises a continuum of stigma-inclusion in Indian policy discourses, with the legacies of criminalisation slowly giving way to affirmative actions, but inertial systemic forces continue with marginalisation. On one end of the continuum, we have the deep-rooted stigma where the entrenched Criminal Tribes Act of 1871 and perpetuated by Habitual offender's act 1952 construct a nomadic

identity by labelling them deviants, which in turn creates further police scrutiny and social ostracism (Radhakrishna, 2001). The action of the continuum is explained by theories of stigma (Goffman, 1963) and social exclusion (Sen, 2000): the Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED, 2022) is expected to increase the capabilities in the field of education, health, and livelihoods, and the transition to inclusion starts to occur, though failures of the implementation process, such as underfunding (Rs. 200 crores over five years) and the overlaps in the listings, Scheduled Caste (SC Intersectionality (Crenshaw, 1989) also provides a deeper insight into the intersection of gender and mobility with caste, making DNT women more vulnerable



सत्यमेव जयते



since they cannot move freely with livelihood erosion due to urbanisation of traditional economies (Agrawal, 2018). The Decolonial Inclusion Model presented below combines these theories, which propose stigma reduction by community-based reforms and criticise the instinct of institutional path dependency (Chakrabarty, 2000). Although reformed, even Census 2027 enumeration plans highlight the persistence of inertia: the government refuses in 2025 to adopt the recommendations of the longstanding Anthropological Survey of India (AnSI), which would fill the gaps in data on over 10-15 crore people and provide them a more equitable opportunity (The Hindu, 2025; Drishti IAS, 2025). This spectrum highlights the fact that inclusion has been partial, and that reforms are symbolic and not transformative because of the privileging of sedentary norms in policy formulation, as mobility theory (Urry, 2007) criticises this tendency of policymakers.

This continuum has larger implications that spread to the global nomadism debates, and criticises the role of neoliberalism in undermining the traditional mobilities in India. With reference to the global perspective, DNTs, NTs, and SNTs experience is similar to those of Roma communities in Europe, where the stigma of the era of colonial-like governments results in comparable deprivation of citizenship rights, education, and livelihoods (Hancock, 2002; European Union Agency for Fundamental Rights, 2020). In either case, labelling and capability deprivation are at play in intergenerational poverty, yet India has additional layers in the caste intersections as nomadic groups find their way around the federal discrepancies (Articles 14-17) of constitutional equality (Shankar IAS Parliament, 2026). This erosion is worsened by neoliberalism, which privatises and urbanises land and labour, depriving SNTs of forest resources and grazing lands and directing them to informal economies (Gurukkal, 2023). As observed in India, such policies as SEED, even though in agreement with such Sustainable Development Goals (SDGs) as Goal 10 to reduce inequalities, tend to uphold the neoliberal paradigms, such as market-oriented skills at the expense of cultural preservation, which is criticised by decolonial

perspectives (Fanon, 1963; Chakrabarty, 2000). This criticism shows that globalisation weakens nomadic epistemologies, where the environmental policies limit the mobility and increase economic marginality (Tripura, 2023). This is a worldwide neoliberal push and pull-on Bedouins in the Middle East, but here, in postcolonial India, this is orchestrated by the developmental state, and it insists on mobility-sensitive structures that critique Eurocentric imaginings of progress (Urry, 2007). Such implications demand a policy reorientation to decolonial inclusion, where global discourses about nomadic rights in various situations can be promoted.

Irrespective of its contributions, this theoretical work has its limitations that should be mentioned. Although they can be helpful in criticising systemic problems, theoretical abstractions can ignore the lived experiences of DNTs, NTs, and SNTs because abstract constructs such as the Decolonial Inclusion Framework have a tendency to simplify ground-level, daily reality, such as the daily police harassment of DNTs or gender-based vulnerabilities (Sharma, 2025). The absence of primary ethnographic information causes reliance on secondary sources and policy reports, which restricts the subtlety of the topic, which may reinforce outsider in postcolonial research (Tripura, 2023). To overcome this, in future studies, the proposed framework should be empirically tested by using longitudinal studies by involving the voices of communities with the participatory approach to confirm its relevance in other states such as Maharashtra or Rajasthan (Gurung and Howard, 2025). This kind of testing would be able to combine quantitative indicators, such as enrolments under SEED, with qualitative storytelling, to have stronger inclusion policies.

Conclusion and Recommendations

This conceptual paper has followed the development of policy attitudes on De-Notified Tribes (DNTs), Nomadic Tribes (NTs), and Semi-Nomadic Tribes (SNTs) in modern India, which was stigmatised in colonial times to being offered partial inclusion. The theoretical development, wherein Goffman (1963) posits the existence of spoiled identities and Becker (1963)



posits the existence of labelling, to Sen (2000) posits the existence of capability deprivation and Crenshaw (1989) posits the existence of intersectionality proves that the colonial legacies continue to exist through the path dependency of institutions to maintain stigmatization despite formal de-notification in 1952. Such policies as the Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED, 2022) are promising as they strengthen the capabilities in terms of coaching, health insurance (e.g., Ayushman Bharat cards), livelihoods through Self-Help Groups (SHGs) that benefit more than 29,517 people in various states, and housing within PMAY schemes (Ministry of Social Justice and Empowerment, 2022; IMPRI Impact and Policy Research Institute, 2025; PIB, 2025). Nevertheless, these advances are not yet fully achieved, as they have been underfunded (Rs. 200 crores over five years, extended until 2025-26), have been slow to implement, and SC/ST/OBC lists suffer from classification overlap, and the 2025 denial of the Anthropological Survey of India (AnSI) advice (The Hindu, 2025; Drishti IAS, 2025). The offered Decolonial Inclusion Model emphasises the necessity of policy reframing on decolonial lines (Chakrabarty, 2000; Fanon, 1963), focusing on mobility rights, cultural continuity, and community agency instead of assimilating practices. The presence of systemic inertia, which manifests through ongoing police surveillance and the loss of livelihood in the conditions of urbanisation, makes it clear that inclusion is not transformative, but tentative, which leaves an estimated 10-15 crore people marginalised (Idate Commission, 2018; Renke Commission, 2008).

These conclusions have a wider scope and help to connect the issues of India with the problems of global nomadism. There are similarities with the Roma people in Europe, where the experience of stigmatisation and lack of access to education and means of livelihood are rooted in historical aspects and paralleled by discrimination and forced sedentarisation (Hancock, 2002; European Union Agency for Fundamental Rights, 2020). Likewise, neoliberal commodification of land, environmental displacement, and state policies favouring settled agricultural production over mobility affect

Bedouin pastoralists in the Middle East and Maasai in East Africa, just like in India, where the traditional economies are being eroded by forest restrictions and urbanisation (Gurukkal, 2023; Human Rights Research Centre, 2023). In such situations, indigenous and nomadic peoples are debilitated and erased in terms of culture, but the international institutions, such as the United Nations Declaration on the Rights of Indigenous Peoples, provide the framework by which the rights-based inclusion can be realised (United Nations, 2007). In India, vulnerabilities are further added by neoliberal pressures, especially in semi-nomadic populations, which depend on seasonal migration and this brings out the urgency of decolonial reforms, which are a challenge to the Eurocentric concept of progress (Urry, 2007).

Its policy, theoretical, and advocacy-level recommendations are aimed at the promotion of transformative inclusion.

Policy Recommendations: Have a permanent and constituted National Commission on DNTs/NTs/SNTs with statutory powers, sufficient funding, staffing and theoretically-informed input of sociologists and anthropologists as proposed by the DWBDNC (Insights on India, 2025). This would accommodate the advisory restriction of the existing board and make the implementation uniform across states. Make land and housing schemes mobile and adapt PMAY to nomadic residents through portable entitlement, climate change-friendly PMAY adaptations, and conservation policies by creating protected grazing corridors (ActionAid India, 2023). Repeal or reform the legacies of discriminatory laws, such as the Habitual Offenders Act in the country, and focus on full implementation of SEED with more funding and community oversight.

Theoretical Recommendations: Build up advanced intersectional frameworks that are specific to nomadic inclusion and include gender, mobility, and environmental aspects to gain a deeper insight into the vulnerability of women and semi-nomadism (Agrawal, 2018). Promote the use of Census 2027 enumeration as a de-stigmatisation tool, whereby the nature of data collection should be guided by the respectful

consideration of cultural identities and the empowerment of policies based on capabilities without supporting the labels (Economic Times, 2025; Drishti IAS, 2025). This also coincides with the postcolonial theory to provincialise the hegemonic discourses and build frameworks of mobility sensitivity.

Advocacy Recommendations: Facilitate theorising by communities, NGOs and joint ventures with organisations such as ActionAid, whereby DNT/NT/SNT voices can impact discourses and stigma-breaking through grounded narratives (Gurung & Howard, 2025). Carry out awareness campaigns based on the stigma reduction theory (Link and Phelan, 2001), with emphasis on the media, police and the general public to break the stereotypes and create a strong solidarity.

The way forward would be interdisciplinary theoretical expansions, especially including environmental justice to protect the nomadic livelihoods in the face of climate change. The weather, availability of resources, and displacement increase the susceptibility of forest-dependent and pastoral Indian tribes (Nature Scientific Reports, 2025). It would be possible to expand the framework to incorporate the view of climate justice by likening it to the Maasai sales in Tanzania or indigenous activism in the Americas; to consider how global warming is linked to marginalisation, and recommend adaptive policies that uphold ecological knowledge and mobility (EarthRights International, 2024). These extensions would contribute to postcolonial literature and teach fair, long-term integration in India and beyond.

References

- ActionAid India. (2023). *Climate justice for pastoralists: The Gujjar community of Himachal Pradesh speaks out*. <https://www.actionaidindia.org/publications/climate-justice-for-pastoralists-the-gujjar-community-of-himachal-pradesh-speaks-out>
- Agrawal, A. (2018). Gender questions at the margins: The case of nomadic and DNT communities. *Journal of Land and Rural Studies*, 6(2), 139–156. <https://doi.org/10.1177/2455632718794756>
- Becker, H. S. (1963). *Outsiders: Studies in the sociology of deviance*. Free Press of Glencoe. <https://search.library.wisc.edu/catalog/999543956902121>
- Bhadane, S. (2020). Tribal sufferings: Revisiting the human rights approach from a Global South perspective with a special reference to India. *Economic and Political Weekly*. <https://www.epw.in/engage/article/tribal-sufferings-revisiting-human-rights-approach>
- CarpeDiem IAS. (2025, December 4). Denotified, nomadic and semi-nomadic tribes – Classification issue. <https://www.carpediemias.com/current-affairs/article/denotified-nomadic-and-semi-nomadic-tribes-classification-issue>
- Chakrabarty, D. (2000). *Provincializing Europe: Postcolonial thought and historical difference*. Princeton University Press. <https://doi.org/10.1515/9781400828654>
- Constitution of India. (1950). Government of India. <https://www.india.gov.in/my-government/constitution-india>
- Countercurrents.org. (2025, January 15). Welfare schemes for denotified, nomadic and semi-nomadic tribes should be more extensive and must reach them soon. <https://countercurrents.org/2025/01/welfare-schemes-for-denotified-nomadic-and-semi-nomadic-tribes-should-be-more-extensive-and-must-reach-them-soon>
- Crenshaw, K. (1989). Demarginalizing the intersection of race and sex: A Black feminist critique of antidiscrimination doctrine, feminist theory and antiracist politics. *University of Chicago Legal Forum*, 1989(1), 139–167. <https://chicagounbound.uchicago.edu/uclf/vol1989/iss1/8>
- Development and Welfare Board for De-notified, Nomadic and Semi-Nomadic Communities. (n.d.). About us. <https://dwbdnc.dosje.gov.in/>
- Drishti IAS. (2025). Denotified tribes to be enumerated in Census 2027. <https://www.drishtiias.com/daily-updates/daily-news-analysis/denotified-tribes-to-be-enumerated-in-census-2027>
- EarthRights International. (2024, June 18). Indigenous and tribal communities advocate for climate justice at Inter-American Court of Human Rights. <https://earthrights.org/blog/indigenous-and-tribal-communities-advocate-for-climate-justice-at-inter-american-court-of-human-rights>



- Economic Times. (2025, December 18). For first time since 1911, denotified tribes to be enumerated in census 2027. <https://m.economictimes.com/news/india/for-first-time-since-1911-denotified-tribes-to-be-enumerated-in-census-2027/articleshow/126044683.cms>
- Economic Times. (2025a, December 18). For first time since 1911, denotified tribes to be enumerated in census 2027. <https://m.economictimes.com/news/india/for-first-time-since-1911-denotified-tribes-to-be-enumerated-in-census-2027/articleshow/126044683.cms>
- European Union Agency for Fundamental Rights. (2020). *Roma and Travellers in six countries*. Publications Office of the European Union. <https://doi.org/10.2811/255003>
- Fanon, F. (1963). *The wretched of the earth* (C. Farrington, Trans.). Grove Press. (Original work published 1961) <https://abahlali.org/wp-content/uploads/2011/04/Frantz-Fanon-The-Wretched-of-the-Earth-1965.pdf>
- Goffman, E. (1963). *Stigma: Notes on the management of spoiled identity*. Prentice-Hall. <https://www.penguin.co.uk/books/435355/stigma-by-goffman-erving/9780140124750>
- Gurukkal, R. (2023). Nomads' land: Exploring the social and political life of the nomad category. *International Political Sociology*, 18(4), olae034. <https://doi.org/10.1093/ips/ola034>
- Gurung, A., & Howard, R. (2025). Challenges of using PAR to promote collective action with denotified tribes in India: Surfacing intersections and tensions between religious and other inequalities. *World Development*. <https://doi.org/10.1016/j.worlddev.2025.106568>
- Hancock, I. (2002). *We are the Romani people*. University of Hertfordshire Press. <https://uhpress.herts.ac.uk/title/We-are-the-Romani-people-9781902806198>
- Human Rights Research Centre. (2023, April 18). Nomadic lives series: Threats to nomadic people in focus. <https://www.humanrightsresearch.org/post/nomadic-lives-series-threats-to-nomadic-people-in-focus>
- Idate Commission. (2018). *Report of the National Commission for Denotified, Nomadic and Semi-Nomadic Tribes*. Ministry of Social Justice and Empowerment, Government of India. <https://socialjustice.gov.in/common/76651>
- IMPRI. (2025, June 25). Scheme for economic empowerment of de-notified, nomadic and semi-nomadic tribes (SEED), 2022. <https://www.impriindia.com/insights/scheme-economic-empower-nomadic>
- Insights on India. (2025). De-notified, nomadic and semi-nomadic tribes (DNTs). <https://www.insightsonindia.com/2025/09/18/de-notified-nomadic-and-semi-nomadic-tribes-dnts>
- Link, B. G., & Phelan, J. C. (2001). Conceptualising stigma. *Annual Review of Sociology*, 27(1), 363–385. <https://doi.org/10.1146/annurev.soc.27.1.363>
- Ministry of Social Justice and Empowerment. (2022). *Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED)*. Government of India. <https://dwbdnc.dosje.gov.in/content/seed-scheme>
- Nature Scientific Reports. (2025). Assessment of livelihood vulnerability to climate change among tribal communities in Chhindwara and Dhar district, Central India. <https://www.nature.com/articles/s41598-025-90769-8>
- Online UPSC Institute. (2025, December 23). Understanding the status of denotified and nomadic communities in India. <https://www.onlineupscinstitute.com/current-affair/understanding-the-status-of-denotified-and-nomadic-communities-in-india>
- PIB. (2025, December 17). Economic empowerment of denotified, nomadic and semi-nomadic tribes. <https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2205284>
- RACE IAS. (2025, September 18). SEED scheme & denotified tribe. <https://raceias.com/current-affairs/seed-scheme-denotified-tribe>
- Radhakrishna, M. (2001). *Dishonoured by history: "Criminal tribes" and British colonial policy*. Orient Blackswan. https://books.google.com/books/about/Dishonoured_by_History.html?id=ggQS6VKWuJYC
- Renke Commission. (2008). *Report of the National Commission for Denotified, Nomadic and Semi-Nomadic Tribes*. Ministry of Social Justice and Empowerment, Government of India. <http://dwbdnc.dosje.gov.in/public/uploads/news/82701715669482.pdf>
- Sen, A. (2000). *Social exclusion: Concept, application, and scrutiny*. Office of Environment and Social Development, Asian Development Bank. <https://www.scirp.org/reference/referencespapers?referenceid=2282357>

Shankar IAS Parliament. (2026). State of denotified tribes. <https://www.shankariasparliament.com/current-affairs/state-of-denotified-tribes>

Sharma, A. (2025). From colonial labels to contemporary stigmas: An epistemological understanding of the Nat community in India. *Asian Anthropology*, 24(3), 1–20. <https://doi.org/10.1080/1683478X.2025.2518031>

The Hindu. (2025, December 3). Centre 'not classifying' denotified tribes despite survey report. <https://www.thehindu.com/news/cities/Delhi/centre-not-classifying-denotified-tribes-despite-survey-report/article70353993.ece>

The Hindu. (2025a, December 3). Centre 'not classifying' denotified tribes despite survey report. <https://www.thehindu.com/news/cities/Delhi/centre-not-classifying-denotified-tribes-despite-survey-report/article70353993.ece>

Tripura, B. (2023). Decolonising ethnography and tribes in India: Toward an alternative


methodology. *Frontiers in Political Science*, 5, Article 1047276. <https://doi.org/10.3389/fpos.2023.1047276>

United Nations. (2007). *United Nations Declaration on the Rights of Indigenous Peoples*. <https://www.un.org/development/desa/indigenouspeoples/declaration-on-the-rights-of-indigenous-peoples.html>

United Nations. (2015). *Transforming our world: The 2030 agenda for sustainable development*. <https://sdgs.un.org/2030agenda>

Urry, J. (2007). *Mobilities*. Polity. <https://www.wiley.com/en-us/Mobilities-p-9780745634197>

Usthadian Academy. (2026, January 16). India considers recognising 179 DNT, NT, and SNT communities for reservation benefits. <https://www.usthadian.com/india-considers-recognising-179-dnt-nt-and-snt-communities-for-reservation-benefits>



सत्यमेव जयते

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना (अनुसूचित जाति और अन्य)


घटक-I: नौवीं और दसवीं कक्षा में पढ़ने वाले अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए

- इसमें छात्र अनुसूचित जाति से संबंधित होना चाहिए
- पारिवारिक आय 2.5 लाख रु./वर्ष तक होनी चाहिए

घटक-II: अस्वच्छ और जोखिमपूर्ण व्यवसायों में लगे माता-पिता के बच्चों के लिए (कक्षा I-X)

- हाथ से मेला उठाने वाले कर्मी
- चर्मशोधक और फ्लेयर
- कचरा बीनने वाले
- जोखिमपूर्ण सफाई करने वाले कर्मचारी
- अधिकृत प्राधिकारी से प्रमाण पत्र आवश्यक है

अधिक जानकारी के लिए
<https://socialjustice.gov.in/schemes/92>
पर विजिट करें





सामाजिक न्याय और
अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

वाइब्रेंट इंडिया हेतु पीएम यंग अचीवर्स स्कॉलरशिप अवार्ड योजना (पीएम-यशस्वी)

- ओबीसी, ईबीसी और डीएनटी छात्रों के लिए बनाई गई एक व्यापक योजना
- इसका उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के बच्चों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है ताकि वे गुणवत्तापरक शिक्षा प्राप्त कर सकें

अधिक जानकारी के लिए
<https://socialjustice.gov.in/>
पर विजिट करें



[@msjgovi](https://socialjustice.gov.in/) [@msjgovi](https://socialjustice.gov.in/) [@goimsjo](https://socialjustice.gov.in/) [@ministryofsocialjustice511](https://socialjustice.gov.in/) [@media.socialjustice](https://socialjustice.gov.in/) | [@socialjustice.gov.in](https://socialjustice.gov.in/)



Submissive Virtues, Subversive Voices: Gendered Moral Economies and the Narrative Discipline of the *Jātaka* Tales

Prof. Snigdha Singh¹

Dr. Swasti Alpana²

Abstract

This paper interrogates four *Jātaka* tales namely *Vessantara*, *Mahājanaka*, *Kakati* and *Chaddanta* from a gendered lens. The paper makes use of the ideas of Judith Butler's theory of gender performativity. It examines how women, in the *Jātaka* tales are delineated as righteous, loyal or disobedient yet they do not get to narrate their own stories nor are allowed to make their own spiritual choices or moral authorship. Thus, the *Jātaka* tales do not let women have a say in the authorship of these stories. On the other hand, male Bodhisattvas perform renunciation and sacrifice as heroic acts on the path to enlightenment, female figures are often instrumentalized in rendering emotional supports, or act as moral foils, or cautionary figures.

The paper tries to state that the *Jātakas* construct a moral economy wherein women's suffering is revered but silenced while male virtue is overtly acknowledged which only reaffirms the patriarchal structures. Despite these constraints there are moments and fractures in the of narrative where feminine resistance works as subtle disruptions which may help us to examine a more complex understanding of gender and moral agency/ ethical autonomy.

Keywords *Jātaka*, *Vessantara*, *Mahājanaka*, *Kakati* and *Chaddanta*

Introduction

Gender and Morality in the *Jātaka* Corpus

The *Jātaka* stories narrates the previous lives of the Buddha which is a key component of the ethical and didactic thought process of the early Buddhist texts. There are more than five hundred short stories which serve as the keepers of *karmic* law, moral role models and

social lessons, through memorable allegories of kings, ascetics, animals, and common people. The stories explicitly illustrate the gradual development of the ten virtues (*pāramitās*) that help in the culmination in Buddhahood yet they also reflect the gendered and societal norms held by society. These stories often demonstrate, challenge, or reinforce the social, cultural and gendered assumptions. They reflect the gender stereotypes like male dominance versus female submissiveness or, conversely, act as tools to combat these biases.

The *Jātakas* prioritize morality and the notion of *karma*, but they do not exhibit an ideologically neutral position. A thorough analysis of the stories reveals their essential patriarchal ideals. Typically, the Bodhisattva and other male figures are depicted as self-reliant moral agents who make critical spiritual decisions through acts of sacrifice and renunciation. In contrast, female figures are always presented in a relational manner, such as wives, mothers or queens or seductresses whose primary duty is to support the protagonist's moral journey or put him/her at risk. Despite the emphasis on their welfare efforts, women's contributions are seldom acknowledged nor are their sacrifices appreciated instead it has often been suppressed.

This paper delves about the gendered moral economies present within the corpus of the *Jātaka* stories. These tales, which emphasize feminine virtues, suffering in silence, are meant to facilitate the growth of men spiritually. A close-readings of these four *Jātaka* stories, *Vessantara*, *Mahājanaka*, *Kakati*, and *Chaddanta* illustrates the enduring imbalances in the distribution of narrative voice and moral authority. These stories frequently highlight a conflict in which women are crucial to the moral and emotional aspects of the narratives but are seldom given any narrative autonomy or spiritual sovereignty.

¹ Professor, Department of History, Miranda House, University of Delhi.

² Associate Professor, Department of History, Satyawati College, University of Delhi.

Theoretical Framework

The *Jātakas* feature gender-specific script which recognizes the roles of a selfless wife, devoted mother or daughter, jealous queen, and dangerous woman. Throughout the stories these roles are repeated and femininity is established as a moral position rather than merely an independent position of the subject. Butler's structure enables us to observe how these performances stabilize patriarchal hierarchies, but their fragility is exposed through occasional narrative loops.

With the help of Judith Butler's theory of gender performativity this paper conceptualizes the *Jātakas* as dynamic discursive spaces where power, gender, and morality are constantly and continually being negotiated. The study highlights the use of endurance, silence, and resistance as examples of complex moral texts that both firmly uphold and implicitly challenge patriarchal principles.

Judith Butler's books *Gender Trouble* (1990) and *Bodies That Matter* (2011) question the idea that gender is a fixed identity. Instead, Butler argues that gender is created through repeated, socially controlled actions. Therefore, gender is a 'doing' not a 'being' as gender is constantly negotiated through social and cultural norms that dictate what can be considered acceptable and others as deviant.

Gender also influences culturally acceptable roles in the *Jātakas* like self-sacrificing wife, a loving mother, jealous queen or woman of desire who is always portrayed as dangerous. These roles are repeated in the stories and represent femininity as a moral position not as an individual. Butler's ideas help us understand how these repeated roles support patriarchal structures and norms yet sometimes one finds small breaks or cracks present in the patriarchal edifice which help us to understand that there is evidence of space for subversion.

Feminist Narratology and the Politics of Voice

Susan S. Lanser and Robyn Warhol have communicated that narrative authority is often uneven. Male voices are seen as morally legitimate while female voices are muted, pushed aside, or limited to inner thoughts. In the

Jātakas the male protagonists are given a voice, moral options and the capability to deliberate. Meanwhile, women even if they are central to the story are denied any chance to articulate or manifest their desires or thoughts.

Lanser's idea of 'structuring absence' helps explain this pattern. In stories like *Vessantara* and *Kakati*, women are at the center of the narrative but they do not have a voice. Their inner lives are shown only through the perspectives of male characters. In these cases, silence is not neutral yet it works as a tool to support ideals of submissive virtue.

Gender, Morality, and the Ethical Asymmetry

This article also draws on the writings of Carol Gilligan and Nel Noddings who helped to situate women's moral positioning not merely as passive or derivative but as embodying a distinct ethical voice that has often been obscured by patriarchal narrative structures. Carol Gilligan in *A Different Moral Voice* (1982) tells us 'For women, identity is defined in a context of relationship and judged by a standard of responsibility and care' (Gilligan 1982, 149).

According to her when women make decisions they often do so because they care about others which helps to provide a valuable lens for reading feminine virtue not as mere compliance but as an ethics of care.

This is a crucial in our understanding of feminine figures like *Maddī* in the *Vessantara Jātakas* and *Sīvalī* in the *Mahājanaka Jātakas*. Their actions are guided by their relationships with others not as abstract attachment. Both of them in these stories are not the focus but they help the protagonists like *Vessantara* and *Mahājanaka* in their path of renunciation. Thus, the *Jātakas* also rely on the ethics of care.

Nel Noddings also emphasizes care as a foundational ethical relation. Noddings asserts that moral action arises from attentiveness and responsiveness to others. Her work enables a reimagining of women in the *Jātakas*, not as passive victims, but as moral agents whose contributions sustain the ethical context despite its narrative devaluation.



Re-examining the *Jātakas* as Gendered Texts

This paper aims to examine the *Jātakas* stories from a gender vantage point of view. The aim is to move beyond the conventional understanding and instead delve into the reinforcement, contestation or construction of gender norms. This allows us to penetrate the fabric of society during that era and interpret the *Jātakas* tales as not only as ‘moral fables’ but as windows to social order.

The paper seeks to use a close examination of the textual structure, characterization, silence, and impact that emphasizes the narrative. Butler’s concept of performativity which highlights the importance of cultural norms in determining gender. Through the definition of care ethics by Carol Gilligan and Nel Noddings, one can examine empathy, nurturing, and loyalty embodied by women but marginalized in the stories.

The examination aims to challenge the narrative of silence, where women’s speech, preferences, or subordination are obscured and effaced, as a way to question structural gendering through this analysis. Silence therefore, should not be perceived as absence but as a site of ethical meaning. Silence has meaning; it is not just the absence of sound. It is a method of narrating a story that highlights the powerful and the marginalized. The stories of *Vessantara*, *Mahājanaka*, *Kakati*, and *Chaddanta* are examined to determine how they dictate morality while denying women the autonomy to share their own narratives. In essence this paper is an attempt through these stories to deconstruct patriarchal structures wherein women are expected to act but are not permitted to make their own choices. So the objective is to recover the submerged voices of women and examine these silences through a gendered perspective.

Gendered Moral Economies: Close Readings of Four *Jātaka* Tales

1. The *Vessantara Jātaka*: Sacrifice and Silencing

The subject of the *Vessantara Jātaka* is the quest of Bodhisattva for perfect charity that

is *dāna pāramī*. In order to demonstrate the true meaning of giving, the *Vessantara Jātaka* tells the tale of the Bodhisattva who gave away all the things that were most important to him, such as his wife and children. The Bodhisattvas’ journey to perfect charity in the story of the *Vessantara Jātaka* are meant to be motivational unfortunately it fails to acknowledge the importance of *Maddī*’s contributions. A closer examination of the *Vessantara Jātaka* reveals its deeply gendered moral economy, one that disproportionately burdens women. *Maddī*, the wife of the Bodhisattva, is an example of a compassionate person, who looks after her family, is devoted to them and also suffers in silence.

On the other hand, the spouse of *Maddī* is *Vessantara* who believes that he has total control over his family therefore he can discard them whenever he chooses. *Vessantara* first gives away their children without taking *Maddī*’s permission and then he gifts her away. He does not ask *Maddī* about her thoughts or desires, or whether she was willing to be sacrificed. The *Jātaka* only focuses on the generosity of *Vessantara* where he is letting go of his family without their will. There is no mention of the sacrifices made by *Maddī*.

The *Apannaka* version of the story also focuses on *Vessantara*’s perspective. It does not reveal much about *Maddī*’s thoughts and emotions. There is a moment when *Maddī* returns from the forest and finds her children missing. She is very upset and cries out in desperate grief. Then *Vessantara* explains to her the reasons behind his actions, and the story says that *Maddī* is hurt but it doesn’t consider her pain to be as important as *Vessantara*’s kindness.

From Gilligan’s and Noddings’ perspective, *Maddī*’s actions exemplify relational morality, yet the narrative relegates them to supportive backdrop. Her silence, far from passivity, becomes a site of ethical density—what is absent from speech is present in care. Even when *Vessantara* gives *Maddī* away, she does not object vocally, but her suffering is coded in affective loyalty and willingness when she follows him into



exile. This represents the gendered expectation of the sacrificing wife who is praised but not empowered. Thus, the *Vessantara Jātaka* is really about the Bodhisattvas generosity and *Maddīs* role is secondary. She is an important part of the story but her feelings and actions are not valued as the focus is on the generosity of the Bodhisattva.

When one tries to observe *Maddīs* story from a moral perspective one cannot but notice and that value her ability of caring for others or her ability to endure hardship. The story suggests that *Maddī's* resilience is only valuable if she remains silent. Thus her silence has to be prioritized for her relationships thereby highlighting that what is absent from speech is present in care.

2. The *Mahājanaka Jātaka*: Resistance and Relational Sovereignty

In the *Mahājanaka Jātaka* Princess *Sīvalī* defies the social norms as she exercises political authority after the death of her father and can be seen as a good leader. As instructed by her father she tests whether *Mahājanaka's* was worthy to be her spouse and whether he could be seated on the throne. Later when *Mahājanaka* decides to renounce the world and leave his son and Princess *Sīvalī* behind she does not agree with his decision and her emotional appeal is seen as an obstacle to his moral journey. Later she also renounces the world and leaves the throne with her son but her renunciation is not perceived as her spiritual journey but as an act of emulation.

Princess *Sīvalī's* story initially disrupts the trope of submissive femininity and makes a crack in the patriarchal structure as one can witness political and emotional clarity. One witnesses her in the public space, the court wherein she has interaction with the courtiers. Her voice importantly cannot be erased as she follows her own spiritual path and chooses her relational duties. Yet her voice is ultimately absorbed into the narrative of male spiritual triumph. While her resistance lingers, it is framed as emotional impediment rather than ethical insight.

3. The *Kakati Jātaka*: Desire, Blame, and Moral Erasure

The *Kakati Jātaka* is an example of injustice being meted out to women. Queen *Kakati* gets abducted by a Garuda and later is seduced by a minister from the court when he is bringing her back to the court. Queen *Kakati* was a victim of abuse by these men but is treated unfairly when she is brought back to the court by the minister. Queen *Kakati* was never really heard in the court as her silence is the most important part of the story as the minister is applauded while Garuda is treated in an ambivalent manner. It is only *Kakati* who is termed as wicked and spurned in the court.

This story of *Kakati* is an example of how men and women are treated differently when they err, men are not punished but women are. This story is also to ensure that women do not transgress sexual and moral boundaries but the same does not apply to men. A feminist reading of the story exposes how the narrative disavows her inner world and recasts moral culpability along gendered lines. The absence of *Kakati's* voice becomes symbolic of a broader silencing of female sexuality and moral complexity.

4. The *Chaddanta Jātaka*: Mourning, Memory, and Gendered Blame

In the *Chaddanta Jātaka* the Bodhisattva is reborn as an elephant. His second wife was neglected by her spouse, the Bodhisattva. She is reborn as a queen and wishes to avenge her emotional rebuttal so asks a hunter to get the tusk of the white elephant. The focus is on *Chaddanta* who gives away his life to ensure the hunter can take his tusks from him. Thus the focus remains on his generosity, forgiveness and equanimity.

In this telling of the story there is no space for the feelings and emotions felt by the queen. The suffering of the queen has been totally overlooked and she is only an accessory to the spiritual path of the Bodhisattva. In these stories women are marginalized as their sufferings are never focused along with their thoughts and emotions. The cornerstone of these stories remains asceticism, sufferings or forgiveness of the male protagonist over female experience.



Gendered Scripts and the Reproduction of Social Order

The *Jātaka* tales are stories that not only teach lessons but also provide insight into the social structure of that era. These narratives provide information about the classes that were present. The backbone of the stories are about men who abandon their lives, relying on reason and striving to be spiritual. This creates the impression that men should be in control of their own world. The *Jātakas* portray men as the ones in positions of power. On the contrary women are depicted often as the ones who sacrifice for the benefit of others and their roles are defined by their relationships with other people. Thus, women are depicted as having a life full of emotions and choices, but they are not always seen as independent beings.

These narratives are not random, but rather intended to educate individuals on ethical conduct and the consequences of violating social norms. Male Bodhisattva stories emphasize self-control, choice, and moral determination. His resilience and determination through discipline and decision-making are commended for his ability to overcome challenges. The stories showcase independence and prudence over all desires as the ultimate virtues.

In contrast, women are regarded with different qualities. They are acknowledged for their resilience, emotional stability, and dependability, qualities that permit them to take on supportive or domestic roles. Managing pain in silence is their moral obligation. These gendered patterns help audiences understand what is expected of men and women, and the Bodhisattva narratives reinforce these expectations.

Comparative Synthesis: Moral Economies and the Performance of Gender

The four *Jātaka* tales *Vessantara*, *Mahājanaka*, *Kakati* and *Chaddanta* that one is looking at in this article underline ideas about how men and women are supposed to behave. The differences are evident in the way stories end. The recognition of male protagonists comes from authority figures, the community,

or the moral order, and they progress towards spiritual fulfillment. It is uncommon for female characters, who are integral to the plot, to receive equal recognition or progress. Their imposition or choice of silence typically contributes to the moral development of male characters. Therefore, women and their stories are often not narrated and their merit is appreciated without the rewards or commendations that come with being male.

Judith Butlers idea of gender performativity is really important to be contemplated here. When people do things that are typically thought of masculine or feminine like giving, enduring, renouncing and grieving it helps to make their identity more stable. It also shows who has power. In the *Jātakas*, it is customary for men to take on the task of spiritual growth whereas women are responsible for keeping their families and emotions in sync. The stories reveal that these roles are not as distinct as they seem. The repeated actions demonstrate that the concept of exclusively identifying as male or female is not entirely valid. Judith Butlers idea of gender performativity helps us understand this. The work that women do to take care of people's feelings really shows that the simple idea of a man being in charge is not that simple. The concept demands that women give up their lives and provide emotional support for others. Why? Women undertake this type of work. It proves a man's perception of authority is not entirely accurate. Women's ethical duty truly impacts the notion that men should have authority.

By enacting and creating expectations, the *Jātakas* go beyond simply illustrating virtue. They prioritize male self-determination and marginalize women, creating a moral framework in which patriarchy seems justifiable and even divine. The scripts contain moments of rupture, such as *Sīvalī's* resistance, *Maddī's* still-powerful power, expunging of *Kakati's* narrative, and the queen's penitence in *Chaddanta*. All these examples reveal an alternative to patriarchal morality that is fleeting yet powerful.

The former queen of the Bodhisattva is depicted in the *Chaddanta Jātaka* as a source of regret and envy. Her loss and grief are



highlighted and viewed as a weakness and she is contrasted with the Bodhisattva who maintains composure and self-control. The idea that women are controlled by emotion and men are calm and spiritually superior is reinforced by the simplified and flattened presentation of the queen's emotions. Her portrayal serves to uphold a gendered hierarchy in which moral strength and masculinity are associated with emotional restraint.

Performing Gender and Moral Worth

Judith Butler contends that gender is achieved through repeated actions. Narrative spaces in the *Jātaka* tales are where gendered moral roles are played and made explicit, rather than being solely stories about men or women. Male characters in these stories exhibit virtuous behavior by engaging in acts of kindness, selflessness, and giving up things to avoid unpleasantness. Men are rewarded for their actions as they are perceived as moral agents, because these actions are thought to be conscious choices. In contrast, women exhibit virtue through compassion, perseverance, emotional control, loyalty, and moral judgment. However, these behaviors are rarely recognized as autonomous or intentional. Rather, virtues of women are portrayed as encouraging reactions to male behavior. In line with Butler's theory that gender is formed through performance, the stories thus assign different moral scripts to men and women. This imbalance is exemplified by the *Vessantara Jātaka*. *Maddī's* perseverance, devotion, and silent suffering are only acknowledged in connection with his deeds while *Vessantara's* acts of charity are portrayed as world-shaping moral accomplishments. Her virtue is significant because it upholds *Vessantara's* path, her moral strength is never acknowledged as autonomous ethical agency.

A similar tension appears in the *Mahājanaka Jātaka*. *Sīvalī's* public speech and resistance articulate a relational ethics grounded in responsibility and care. However, in the end, the story reframes her behavior as reactive and returns moral authority to the male lead. This reiterates that the main objective of the story is spiritual achievement of the man.

Silenced Speech, Amplified Suffering

Women's voices in these *Jātaka* stories are consistently muted, and the story only enhances their suffering. These virtues do not stand alone, they are used to direct the moral development of the Bodhisattva. This is significant because it makes male moral authority seem complete and logical.

In the *Kakati Jātaka*, the queen's silence is meant to be a punishment. In *Chaddanta*, the queen's sorrow is pathologized instead of acknowledged. Without narrative agency, women's pain is either moralized for others or dismissed as excessive emotion. The fact that they are partially expressed but not fully articulated highlights the importance of feminine suffering in the making of Bodhisattva-centered storytelling.

Nel Noddings ethics of care reveals the marginalization of these narratives. An alternative moral world is represented by the moral realms of women, which are determined by relationality, loyalty, memory, and care. These behaviors support social and emotional life, even though they are rarely seen as moral accomplishments. Stories only indirectly mention such work but it is not given any intrinsic moral significance.

The Asymmetry of Agency

All four stories depict men exhibiting actions, choosing, abandoning, traveling, and succeeding. Women on the other hand are viewed as proactive, their behavior restricted by familial bonds, duties, or divine mandates. *Sīvalī's* judgment leads to the narrative of re-absorption into male narrative that emphasizes renunciation and spiritual triumph. The portrayal of masculine action is that it can bring about transformation and change to the world, while feminine action requires sacrifice and sustainment. This sacrifice is crucial for male virtue. Despite the lack of recognition or mention of female contributions, they still have the potential to be male heroes due to their loyalty, stamina and emotional resilience.

Contesting the Moral Script

Despite their discipline-oriented nature, these stories are not flawless. They are supposed



to uphold the moral order they've been given, but their antagonism towards *Maddī's*, *Sīvalī's*, apathy towards *Kakati*, and sorrow for the queen in *Chaddanta* undermine their power. These instances indicate alternative ethical approaches in which caring, emotional duty and relational responsibility are morally significant.

The *Jātaka* stories depict gender as a negotiated terrain rather than merely arbitrary moral binary. Although patriarchal ideals are dominant, feminine ethics remain marginalized, overshadowing renunciation with perseverance, sacrifice, and unacknowledged moral pressure.

Gendered Scripts and Social Order

Taken together, these stories celebrate male autonomy and moral clarity while confining feminine virtue to endurance and care. As pedagogical texts, they instruct audiences in gendered ideals of conduct. At the same time, their reliance on feminized sacrifice exposes a fundamental instability: male moral authority is sustained by the very ethical labor it refuses to recognize.

Social Relations and Gendered Hierarchies in the *Jātakas*

One can learn a lot from the *Jātaka* stories about how men and women behaved and what they believed to be right and wrong. They also paint a picture of social classes and how people were expected to interact with one another. The *Jātaka* stories describe how people should act toward their families, their social class, the king, and other people. A person's gender has an impact on all of these things. The *Jātaka* stories frequently discuss doing the right thing in relation to family, social class, the royal family, and what one is expected to do for one another.

The *Vessantara Jātaka* one sees *Maddī* as a wife who is devoted to her family, follows instructions of her husband, continues to support her husband *Vessantara* even after he sends her away. *Maddī* is an example of a woman who puts her family first. The *Vessantara Jātaka* uses *Maddī* to show us what it means to be a woman in a family where the man is in charge wherein women are valued for being loyal to their family.

The story of *Maddī* and *Vessantara* teaches us about the importance of sacrifice and loyalty in a family.

In the *Kakati Jātaka* Garuda takes her away. This story highlights the role of women like Queen *Kakati* in politics and how men control them. What makes Queen *Kakati* a good person is that she stays quiet and loyal. Her body is a place where the king's power, people's desires and the rules of society all come together. Queen *Kakati* does not have any say in what happens to her. The *Kakati Jātaka* informs us that Queen *Kakati's* body is important but her thoughts and feelings are not important.

A slightly different register is provided by the *Mahājanaka Jātaka*. *Mahājanaka's* triumphant story of renunciation and kingship contrasts with *Sīvalī's* sorrow and mourning, even though it is not highlighted. Her involvement in the rituals of loss and transition, as well as her emotional labor, are essential but unseen elements of the moral landscape.

These tales demonstrate the interplay between gender and social hierarchy. Women are expected to excel in their roles as wives, mothers, queens, and consorts. What people believe to be morally appropriate for women is shaped by these roles. However, men are frequently allowed to develop spiritually, engage in politics, and become heroes on their own. It is not a coincidence but is a component of the moral lessons that the stories are attempting to convey. Stories of men and women are not equal. The roles that women play are the focus of their stories whereas the stories of men are about their accomplishments. This distinction is crucial to the narratives as the *Jātakas* demonstrate how social roles influence women's voices.

Classed Femininity: Queens, Commoners, and the Politics of Virtue

The *Jātaka* tales apprise us how society is divided into levels through the way female characters are portrayed. The difference between women from families and ordinary women is not just about the role they play in the story but it is also about what they represent. Women from families like queens, wives of kings or princesses are often shown as examples of good values



सत्यमेव जयते



that are important for a kingdom. Their purity, loyalty and willingness to sacrifice are symbols of character. Hence, the *Jātaka* tales use women, such as queens and princesses to make a point about the importance of these qualities for royal families.

Non-elite women like village residents and wives without names are not viewed with morality; they appear to symbolize suffering or to emphasize the greatness of the Bodhisattva. Their undisclosed traits reveal a narrative hierarchy in which virtue is classed and only reserved for elites. This inequality highlights the role of class in regulating the ethical register of virtue, the queen's loyalty is presented as a public display of excellence, while the same virtue in an ordinary woman is limited to personal morality and not political considerations.

For example, the *Vessantara Jātaka* is a story about *Vessantara* and his wife *Maddī* wherein *Maddī*'s suffering is important given realism because she is a queen. The virtue of her patience is regarded as wifely goodwill, but her physical pain is used to prove *Vessantara*'s righteousness and capacity for kingship. Queen *Kakati*'s purity and silent behavior are considered symbols of royal honour in the *Kakati Jātaka*. She is a strong supporter of endurance in the face of suffering, and her body is bound by moral and political principles that are appropriate for the kingdom.

By leveraging the work of Uma Chakravarti one can say that upper-caste women are constructed as models of dignity while lower-caste women are made invisible or dishonorable. The framework accounts for why the suffering of elite women is moralized and justified, while the labor and emotional state of non-elite women remain unrecognized. Classed representations reveal that moral recognition in the *Jātaka* is intersectional as caste and class play a crucial role in determining who is considered virtuous and silenced.

Hierarchies of Silence: Structured Absence and Gendered Control

The stories in this collection often have a theme. It is about a man who gives up everything and a woman who waits for him. For example,

in the *Mahājanaka Jātaka* the protagonist goes through a journey of self-discovery. On the hand Queen *Sīvalī* has to remain strong and wait for him and she has to deal with her emotions which is not seen as important even though it is crucial to the story's message. The story of the renouncer and the waiting woman is a recurring theme. The male renouncer gets to go on a journey of self-discovery. The waiting woman, like Queen *Sīvalī* has to be patient and strong.

In the *Vessantara Jātaka Maddī* is an example of a devoted wife who agrees to everything *Vessantara* does even when he gives away their children and eventually her. This is seen as an example of a perfect wife as she does not argue nor does she ask any questions. The fact that *Maddī* does not speak is important to the story. It also tells us something, about what the people who wrote it believe. As *Maddī* is silent *Vessantara* can give up everything yet be seen as a good person. The *Vessantara Jātaka* shows that *Maddī*'s silence is what makes *Vessantara*'s actions seem right.

These women are not without the ability to make their decisions but stories do not allow them to resist the situations they are in. The stories create a sense of morality by showing that it is good for these women to be silent. According to Gayatri Spivak when women who are not in power try to speak they are often ignored. In the *Jātakas* these women are not even given the chance to give voice to their thoughts or feelings and this absence shows what is missing from the stories. The stories of the *Jātakas* create a situation where the women are silent and this silence is not questioned. The women in the *Jātakas* like the *Jātakas* themselves are a part of the story but the women in the *Jātakas* are not heard.

Nevertheless, this silence is really powerful. When one looks at the moments in the *Jātakas* one should not think of them as empty spaces rather these silences are actually very meaningful. They reveal about the way women are treated. It is not about what women do or say in the *Jātakas* that exhibits their role. It is also about what they're not allowed to say and what they have to stay quiet about. This silence really shows us how the Buddhist texts support men being in charge and what is expected of women. The *Jātakas* are



Buddhist texts and they teach us about the rules that men and women are supposed to follow. By looking at what women are not allowed to say one can see the true nature of these rules and how they affect women. The *Jātakas* are, like a guide that teaches people about the wrong way to live and they have a lot to say about how men and women should behave.

Conclusion

Gendered Virtue and Narrative Silence in the *Jātaka* Corpus

The importance of the *Jātakas* tales in promoting morality is well-known within the tradition. Many of these stories offer valuable insights into how people should conduct themselves. They also demonstrate how society was shaped during that time, with both genders receiving equal treatment. It is the women who bring the stories to life and make them relatable in *Jātakas* tales. The Bodhisattva and other men are the primary movers of the *Jātakas* tales when it comes to important ethical decisions. The women in these stories often have to sacrifice their own lives, such as being quiet, loyal, or suffering, to make the men become better men. The *Jātakas* tales feature a repetitive pattern that represents the expected conduct of women. *Jātakas* tales are about the Bodhisattvas endeavor to attain perfection and the women often provide support to facilitate his progress. This article extensively delves into specific *Jātaka* tales that feature *Vessantara* and *Mahjanaka* as prominent figures in their morality.

The women in these stories like *Maddī*, *Sīvalī* and *Kakati* are not shown in the same manner. The stories that include them are more restricted and do not allow them space to perform according to their free will. Thus, *Jātaka* tales have rules which are different for men and women. The *Jātaka* tales show that men like *Vessantara* and *Mahājanaka* get to make their own choices but women are shown only to be loyal and loving. Women are only important when they help men become better men.

The *Jātakas* portray a world where men abandon their desires, often due to the actions of women who remain silent or grateful. Women

like *Maddī*, *Sīvalī*, *Kakati* and the queen in *Chadanta* are not passive observers.’ Their thoughts and ideas are not always accepted by others. Women only listen and agree with men on what counts such as being devoted and resilient.

These narratives are intriguing due to their ability to challenge conventional thinking. The quiet moments, the process of coping with emotions, and female characters emotional portrayal suggest different approaches to understanding what is right and wrong. These women are not victims. They have the power to make a difference. When one looks at them from a point of view one sees that they are actually strong who have a good understanding and always try to do the right thing. The women in these stories are not just quiet and sad they are actually people who make choices. They show us what is right and wrong through the way they live their lives. The feminine figures perform their gender in a way they are not just passive they are actually moral actors. The feminine figures are important to the story even if one does not hear their voices in the story.

Gender is reflected in the *Jātakas* when they are told as stories. Gender is not the only concept that the *Jātakas* explore, but how people act out gender roles in their everyday lives by analyzing social expectations and literature. The tales serve as an illustration of how men have always held sway and women have not. People can also seek to challenge and question these norms in their own settings. While gender is controlled in the *Jātakas*, individuals have the ability to challenge these controls and conduct themselves differently. The *Jātakas* demonstrate that individuals engage in the act of performing a performance related to gender and this act can be modified.

Epilogue: Echoes Beyond the Frame

The *Jātakas* stories are about the spiritual journey of the Bodhisattva. Women hold great significance in these stories as they characterize men with favorable attributes that aid in their development as individuals. This study is trying to hear and interpret the silences of women. Their silence is actually a way of communication may be a lesson to be learnt.



Our consideration of depictions and representation of women in *Jātakas* tales does not aim to make them less special or significant. Our goal is to grasp their meaning. Looking at the *Jātakas* tales from a gender perspective allows us to appreciate their depth and significance. These stories have been retold for a long time and have facilitated the discussion of what is ethical and unethical. These stories are powerful due to their ability to be understood.

When one reads these stories and thinks about them from a different vantage point of view regarding how they are performed it alternates the way one visualizes the difference between what is good and what people say, giving up and being quiet and letting go and being connected to others. The women in the *Jātakas* are not there to only help the men or make them look good. They are people who affect the relationships between others they have their way of thinking about what is right and wrong. *Maddī* for example always stays loyal, *Sīvalī* who understands politics, *Kakati* who is too ashamed to speak or the queen who is not named and is overcome with sadness. The women in these stories are seen as important to the morals of the story. They are also limited by the way society is structured. Importantly, they are characters who help tell the story of how people should treat each other. Being good is not about giving things up it is about working together caring for each other and depending on each other to do what is right. The *Jātakas* show us that being good is about the Bodhisattva and people, like *Maddī*, *Sīvalī* and *Kakati* all working to create a better world.

Despite all these layers, the *Jātaka* tradition's objectives remain paramount. Ultimately it elevates their worth because one recognizes the occurrences in society and between genders that aid us in comprehending our identity. Additionally, recognizing the presence of resistance, resilience, and relational strength within the patriarchal system is to acknowledge these silences and voices which will remain of importance.

References:

Butler, Judith, *Bodies That Matter: On the Discursive Limits of Sex*, Routledge; United Kingdom, 2011

Butler, Judith, *Gender Trouble: Feminism and the Subversion of Identity (Thinking Gender)*, Routledge: United Kingdom, 1990.

Cabezón, José Ignacio, ed. *Buddhism, Sexuality, and Gender*, Albany: State University of New York Press, 1992.

Cowell, E. B., ed. *The Jātaka or Stories of the Buddha's Former Births*, 6 vols. Translated by various scholars. Cambridge: Cambridge University Press, 1895–1907. Reprint, Delhi: Motilal Banarsidass, 1990.

Devadas, Nalini, "Rewriting Gender in Buddhist Narratives," *Journal of Feminist Studies in Religion* 23, no. 2 (2007): 33–50.

Faure, Bernard, *The Power of Denial: Buddhism, Purity, and Gender*, Princeton: Princeton University Press, 2003.

Gilligan Carol, *In a Different Voice* Harvard University Press, July 1990.

Gross, Rita M. *Buddhism After Patriarchy: A Feminist History, Analysis, and Reconstruction of Buddhism*. Albany: State University of New York Press, 1993.

Lanser, Susan Sniader, *Fictions of Authority: Women Writers and Narrative Voice*, Cornell University Press, 1992.

Noddings, Nel, *Caring, A Feminine Approach to Ethics and Moral Education*, University of California Press; 2nd edition, 2003.

Roy, Kumkum, (ed.) *The Power of Gender & The Gender of Power: Explorations in Early Indian History*, Delhi: Oxford University Press 2010

Warhol, Robyn R. and Herndl, Diane Price, *Feminisms: An Anthology of Literary Theory and Criticism*, Rutgers University Press; Revised edition, 1997.



हाशिये से मुख्यधारा तक:

विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों की शैक्षिक, स्वास्थ्यगत और आर्थिक चुनौतियाँ

प्रवेन्द्र सिंह बिरला¹

डॉ. क्षमा पाण्डेय²

सारांश

यह लेख भारत के विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों की बहुआयामी वंचनाओं और उन्हें हाशिये से मुख्यधारा में लाने की चुनौतियों का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है। ऐतिहासिक रूप से औपनिवेशिक शासन द्वारा लागू आपराधिक जनजाति अधिनियम (1871) ने इन समुदायों को सामाजिक कलंक, संरचनात्मक बहिष्करण और गहन असुरक्षा की स्थिति में धकेल दिया, जिसकी छाया आज भी समाज और प्रशासनिक तंत्र में विद्यमान है। स्वतंत्रता के बाद यद्यपि कानूनी रूप से उन्हें *विमुक्त* किया गया, किंतु सामाजिक सोच, नीतिगत अस्पष्टता और प्रशासनिक उपेक्षा के कारण वे आज भी नागरिकता के पूर्ण अधिकारों से वंचित हैं। लेख दर्शाता है कि इन समुदायों की समस्याएँ केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक, शैक्षिक, स्वास्थ्यगत, सांस्कृतिक और लैंगिक स्तरों पर परस्पर जुड़ी हुई हैं। शिक्षा के क्षेत्र में घुमंतू जीवनशैली, उच्च ड्रॉप-आउट दर, मातृभाषा-आधारित शिक्षा का अभाव और डिजिटल विभाजन प्रमुख अवरोध हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्राथमिक सेवाओं तक सीमित पहुँच, कुपोषण, मातृ-शिशु स्वास्थ्य जोखिम और स्वच्छता-अभाव उनकी जीवन-प्रत्याशा को प्रभावित करते हैं। आजीविका के स्तर पर परंपरागत पेशों का क्षरण, अनौपचारिक रोजगार पर निर्भरता, भूमि एवं संपत्ति अधिकारों का अभाव तथा वित्तीय बहिष्करण पीढ़ीगत गरीबी को बनाए रखते हैं। इन सबके बीच महिलाएँ और बालिकाएँ दोहरी-तिहरी वंचना का सामना करती हैं, जिससे लैंगिक असमानताएँ और गहरी हो जाती हैं। राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा चलाई जा रही योजनाएँ तथा आयोगों की सिफारिशें सकारात्मक पहल अवश्य हैं, किंतु उनका क्रियान्वयन आंशिक, असंगत और सीमित रहा है। नागरिक समाज और गैर-सरकारी संगठनों के प्रयास जैसे मोबाइल स्कूल, स्वास्थ्य इकाइयाँ और आजीविका आधारित हस्तक्षेप यह दिखाते हैं कि समुदाय-केंद्रित और लचीले मॉडल प्रभावी हो सकते हैं। अंततः लेख यह निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों का समावेशन भारतीय लोकतंत्र और सामाजिक न्याय की वास्तविक कसौटी है। शिक्षा-स्वास्थ्य-आजीविका के समन्वित, अधिकार-आधारित, सहभागी और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील दृष्टिकोण के बिना समावेशी विकास की परिकल्पना अधूरी है। इन समुदायों का सशक्तीकरण न केवल उनके जीवन में परिवर्तन लाएगा, बल्कि भारतीय समाज को अधिक न्यायपूर्ण, समावेशी और मानवीय बनाने की दिशा में निर्णायक कदम सिद्ध होगा।

बीज शब्द: हाशिये से मुख्यधारा तक, विमुक्त एवं घुमंतू समुदाय, शैक्षिक, स्वास्थ्यगत और आर्थिक चुनौतियाँ।

प्रस्तावना

भारत विकास और कल्याण, इन दोहरे आदर्शों के प्रति गहराई से प्रतिबद्ध रहा है। यह समावेशी विकास की उस अवधारणा को पूर्णतः स्वीकार करता है, जिसका आशय यह है कि समग्र प्रगति के लाभ न केवल समान रूप से वितरित हों, बल्कि समाज के सबसे अधिक हाशिए पर पड़े और सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित लोगों तक भी पहुँचें, ताकि उन्हें *मुख्यधारा समाज* के समकक्ष लाया जा सके और सम्मान, सुरक्षा तथा सुविधाजनक जीवन की गारंटी दी जा सके। इसी मूल उद्देश्य के साथ, स्वतंत्रता के बाद से भारतीय राज्य ने अपने संबद्ध संस्थानों को यह दायित्व सौंपा है कि वे उन समुदायों की पहचान करें जो राष्ट्र और उसके नेताओं की सर्वोत्तम मंशाओं के बावजूद भी देश की विकास-गाथा से बाहर रह गए हैं। इसी क्रम में भारत सरकार ने जनवरी 2015 में विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग का गठन किया, ताकि राज्य-वार इन समुदायों की पहचान एवं सूचीकरण किया जा सके, उनकी विकास-स्थिति का आकलन हो सके और उनके आर्थिक उत्थान हेतु उपयुक्त रणनीतियों की संस्तुति की जा सके।

विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू जनजातियाँ भारत के सबसे अधिक उपेक्षित, हाशिए पर स्थित तथा सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समुदायों में से हैं। इन समुदायों में वंचना का स्तर अत्यंत विषम है। इनमें से अधिकांश पीढ़ियों से दरिद्रता का जीवन जीते आए हैं और आज भी अनिश्चित तथा अंधकारमय भविष्य के साथ जीवन यापन कर रहे हैं। उनका बचपन मुस्कान से वंचित होता है, युवावस्था संघर्षों में बीतती है और वृद्धावस्था आँसुओं से भरी होती है। वयस्क जीवन इतना अभावग्रस्त होता है कि भविष्य की बचत या आजीविका में कोई ठोस सुधार संभव नहीं हो पाता। खराब स्वास्थ्य उनकी आयु-प्रत्याशा को भी नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। सामान्य जन से लेकर कानून प्रवर्तन एजेंसियों तक, सभी की आशंकाओं से घिरे ये लोग वैध नागरिकों को प्राप्त अधिकारों से वंचित एक असुरक्षित जीवन जीते हैं। संक्षेप में, ये ऐसे नागरिक हैं जिन्हें अब तक नागरिकता के वास्तविक अधिकार पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हो सके हैं।

मानव विकास सूचकांक में निम्न स्थान पर स्थित ये समुदाय हमेशा से ऐसी दयनीय स्थिति में नहीं थे। औपनिवेशिक शासन ने 1871 में कृष्यात आपराधिक जनजाति अधिनियम लागू कर इनके जीवन पर गहरा आघात किया, जिसके अंतर्गत इन्हें *आपराधिक जनजाति* घोषित कर दिया गया ताकि कठोर उपायों के माध्यम से कथित अपराध-प्रवृत्तियों पर रोक लगाई जा सके।

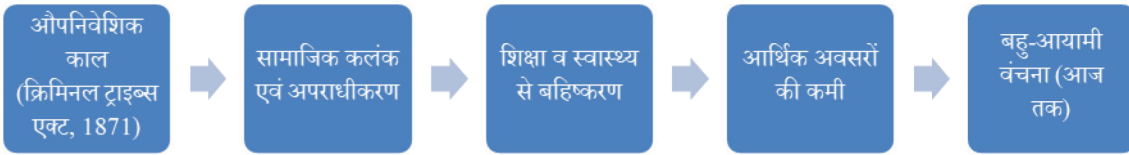
¹ सहायक आचार्य, एम डी एस कॉलेज ऑफ एजुकेशन, कोसली, रेवाड़ी (हरियाणा)

² उपाचार्य, महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)

कुछ व्यक्तियों के कृत्यों के लिए पूरे समुदाय को *आपराधिक* ठहरा दिया गया। यहीं से कलंकित करने और अपमानजनक लेबल थोपने की प्रक्रिया आरंभ हुई, जो आज तक जारी है। अधिनियम के निरसन के बाद भी, समाज और यहाँ तक कि कानून प्रवर्तन एजेंसियों की चेतना में पूर्व *आपराधिक जनजातियाँ*, अब विमुक्त अपराधी प्रवृत्तियों से युक्त मानी जाती रही हैं। आज भी गाँवों में अपराधों की जाँच के दौरान पुलिस अक्सर संदेह के आधार पर विमुक्त समुदाय के सभी सदस्यों, स्त्रियों और बच्चों सहित को घेर लेती है। कलंक व्यक्ति की आयु से भी अधिक समय तक जीवित रहता है इसलिए इन समुदायों के प्रति सामूहिक सोच में परिवर्तन अत्यंत आवश्यक है।

कोई भी समुदाय जन्मजात अपराधी नहीं होता। यदि किसी चरण पर उसके कुछ सदस्य आजीविका की तलाश में अपराध की ओर प्रवृत्त होते हैं, तो उसके पीछे कारणों का एक समूह होता है। क्षेत्रीय अध्ययन और द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित गहन शोध स्पष्ट करता है कि औपनिवेशिक शासकों की आक्रामक आर्थिक नीतियाँ लोगों की आजीविका की रीढ़ तोड़ने के लिए प्रमुख रूप से जिम्मेदार थीं। परिणामस्वरूप वे

घोर गरीबी में धकेले गए और जीवित रहने के लिए अपराध को अपनाने के लिए विवश हुए। उनके दृष्टिकोण से यह एक अनुकूलन रणनीति थीय अन्यथा वे भूख और कुपोषण से मर जाते। किंतु इस स्थिति की जड़ें औपनिवेशिक शासन की विनाशकारी नीतियों में निहित थीं। कुछ विमुक्त जनजातियाँ घुमंतू जीवन-पद्धति का अनुसरण करती थीं, जबकि कुछ घुमंतू जनजातियाँ *आपराधिक जनजाति* सूची में शामिल नहीं थीं। गैर-आपराधिक घुमंतू जनजातियों की भी अपनी समस्याएँ थीं। ब्रिटिश शासन की अनेक नीतियाँ उनके जीवन और आजीविका के लिए हानिकारक सिद्ध हुईं। नए आर्थिक ढाँचे के आगमन से वे अपनी पारंपरिक आजीविकाएँ खो बैठे। एक ओर वनों में प्रवेश और मुक्त आवागमन पर प्रतिबंध लगा, तो दूसरी ओर किसानों के साथ संघर्ष उत्पन्न हुए। बहुफसली खेती के विकास के साथ पशुपालक घुमंतुओं और कृषकों के बीच की पारंपरिक सहजीविता टूट गई। औद्योगीकरण और तकनीकी प्रगति ने घुमंतुओं के अनेक व्यवसायों और उनके उत्पादों को अलाभकारी बना दिया, जिससे वे गरीबी की श्रेणियों में और नीचे धकेले दिए गए।



आलेख 1. औपनिवेशिक इतिहास से वर्तमान वंचना तक

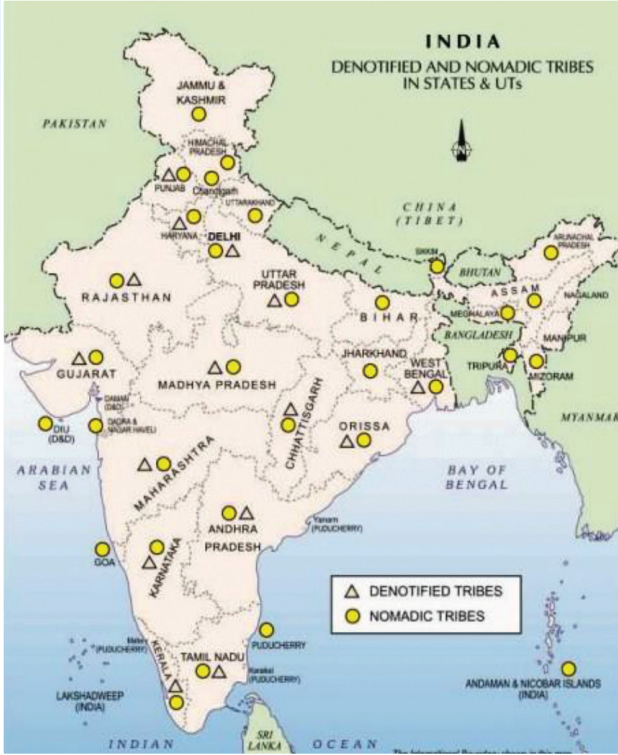
औपनिवेशिक राज्य से आरंभ हुई प्रभुत्व की संरचना ने विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू समुदायों को इस हद तक दबा दिया कि वे संकुचित और हतोत्साहित हो गए। ऐसी स्थिति में राज्य को स्वयं इन समुदायों तक पहुँचना चाहिए, क्योंकि नौकरशाही प्रक्रियाओं और शिष्टाचारों की जानकारी के अभाव में वे सहायता के लिए सरकार तक नहीं पहुँच पाते। भारत जैसे अत्यंत पदानुक्रमित समाज में, सामाजिक सीढ़ी के निचले पायदानों पर स्थित ये लोग गहरी मनोवैज्ञानिक हीनता से ग्रस्त रहते हैं। वे अपने अधिकारों की माँग करने से हिचकते हैं, इस भय से कि कहीं उन्हें अपमानित कर भगा न दिया जाए। इस प्रकार, विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि केवल अतीत का विवरण नहीं, बल्कि वर्तमान सामाजिक असमानताओं और संरचनात्मक बहिष्करण को समझने की कुंजी है, जो *हाशिये से मुख्यधारा* की यात्रा को आज भी चुनौतीपूर्ण बनाती है।

सामाजिक हाशियाकरण और संरचनात्मक उपेक्षा

विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों की वर्तमान स्थिति को समझने के लिए सामाजिक हाशियाकरण और संरचनात्मक उपेक्षा की प्रक्रिया को केंद्रीय महत्व देना आवश्यक है। ये समुदाय केवल आर्थिक रूप से ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और संस्थागत स्तरों पर भी बहुआयामी भेदभाव का सामना करते रहे हैं। सबसे प्रमुख चुनौती जाति, वर्ग और जीवनशैली आधारित भेदभाव है। घुमंतू जीवन, अस्थायी आवास और पारंपरिक पेशों के कारण इन्हें

अस्थिर, अविश्वसनीय अथवा *अपराध-प्रवृत्त* मानने की सामाजिक मानसिकता आज भी विद्यमान है। जातिगत पदानुक्रम में निम्न स्थान, निर्धनता और सामाजिक अस्वीकार्यता ने इनके हाशियाकरण को और गहरा किया है, जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के अवसरों तक इनकी पहुँच सीमित बनी हुई है।

इसके साथ ही, प्रशासनिक तंत्र में अदृश्यता इन समुदायों की एक गंभीर संरचनात्मक समस्या है। अनेक विमुक्त एवं घुमंतू समूह न तो स्पष्ट रूप से एससी, एसटी या ओबीसी श्रेणियों में चिन्हित हैं और न ही उनके विश्वसनीय आँकड़े उपलब्ध हैं। जनगणना, सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण और नीति-निर्माण प्रक्रियाओं में इनके समुचित आँकड़ों का अभाव इन्हें योजनाओं और संसाधनों से वंचित करता है। परिणामस्वरूप, लक्षित कल्याणकारी योजनाओं का निर्माण और प्रभावी क्रियान्वयन संभव नहीं हो पाता। इन संरचनात्मक कारणों का प्रत्यक्ष प्रभाव मुख्यधारा समाज से सामाजिक दूरी और बहिष्करण के रूप में दिखाई देता है। आवासीय पृथक्करण, सामाजिक सहभागिता का अभाव और संस्थागत अविश्वास ने इन समुदायों को एक बंद सामाजिक परिधि में सीमित कर दिया है। यह दूरी न केवल उनकी सामाजिक गतिशीलता को बाधित करती है, बल्कि आत्मसम्मान, पहचान और नागरिकता की भावना को भी कमजोर करती है। बालकृष्ण रेंके आयोग (2008) के अनुसार विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू जनजातियाँ देश के लगभग 20 राज्यों में निवास करती हैं।



चित्र 1. भारत में विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू जनजातियाँ
(स्रोत: रेंके आयोग रिपोर्ट, 2008)

उदाहरण के लिए, एक ही (विमुक्त या घुमंतू) समुदाय जो सटे हुए राज्यों या केंद्रशासित प्रदेशों में रहता है और स्वभाव से समरूप है, उसे विभिन्न राज्यों में अलग-अलग श्रेणियों में शामिल किया गया है। ऐसे कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

1. बंजारा समुदाय को आंध्र प्रदेश और ओडिशा में अनुसूचित जनजाति, छत्तीसगढ़, गुजरात, हरियाणा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान में अन्य पिछड़ा वर्ग तथा पंजाब, दिल्ली और कर्नाटक में अनुसूचित जाति के रूप में शामिल किया गया है।
2. बावरिया/बवेरिया समुदाय को दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में अनुसूचित जाति तथा गुजरात और मध्य प्रदेश में अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में शामिल किया गया है।
3. बेदिया/बेडिया/बेरिया समुदाय को छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, ओडिशा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में अनुसूचित जाति, पश्चिम बंगाल में अनुसूचित जनजाति तथा कर्नाटक में अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में शामिल किया गया है।
4. कंजर/कंजरी/कंजरभाट/चारा/कंजर/नाथ समुदाय को छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, दिल्ली, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल में अनुसूचित जाति तथा कर्नाटक और महाराष्ट्र में अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में शामिल किया गया है।
5. मदारी समुदाय को मध्य प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, ओडिशा, दिल्ली और राजस्थान में अनुसूचित जाति के रूप में शामिल किया गया है।

में, जबकि उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, हरियाणा और गुजरात में अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में शामिल किया गया है।

6. नट (राणा, बादी)/नट समुदाय को छत्तीसगढ़, दिल्ली, हरियाणा, मध्य प्रदेश, राजस्थान और पंजाब में अनुसूचित जाति तथा गुजरात और कर्नाटक में अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में शामिल किया गया है।
7. ओड समुदाय को हरियाणा और पंजाब में अनुसूचित जाति, जबकि गुजरात और राजस्थान में अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में शामिल किया गया है।
8. येरुकुला/येरुकुलास समुदाय को आंध्र प्रदेश में अनुसूचित जनजाति के रूप में शामिल किया गया है, जबकि वही समुदाय कर्नाटक और तमिलनाडु में अन्य पिछड़ा वर्ग की सूची में है।
9. सांसी/सांसीया समुदाय को दिल्ली, हरियाणा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में अनुसूचित जाति की सूची में शामिल किया गया है, जबकि कर्नाटक में उन्हें अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में सूचीबद्ध किया गया है।

इस प्रकार की विसंगतियाँ कई अन्य मामलों, जैसे अहेरिया, बाजीगर, सपेरा, सिक्कलगढ़ आदि में भी पाई गई हैं, जिन्हें आयोग के संज्ञान में लाया गया है। अतः विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों का सामाजिक हाशियाकरण किसी एक कारक का परिणाम नहीं, बल्कि ऐतिहासिक पूर्वाग्रह, प्रशासनिक उपेक्षा और सामाजिक संरचनाओं की संयुक्त देन है, जिसे संबोधित किए बिना समावेशी विकास और सामाजिक न्याय की कल्पना अधूरी रहती है।

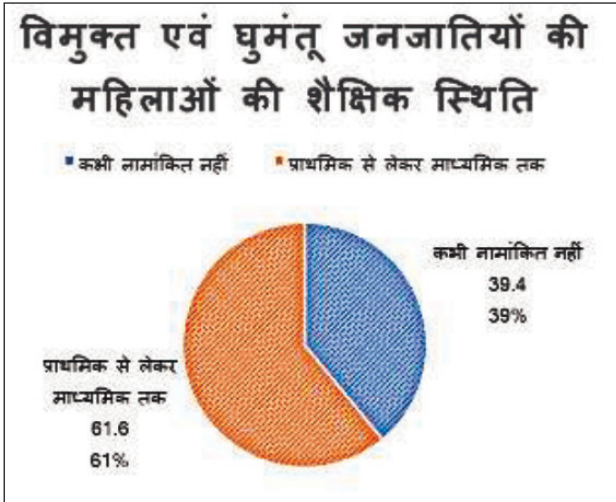
शैक्षिक चुनौतियाँ: पहुँच से गुणवत्ता तक

घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों की शिक्षा से जुड़ी चुनौतियाँ केवल विद्यालय तक पहुँच तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे शिक्षा की गुणवत्ता, प्रासंगिकता और निरंतरता से गहराई से जुड़ी हुई हैं। इन समुदायों की विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियाँ औपचारिक शिक्षा व्यवस्था के समक्ष अनेक जटिल प्रश्न खड़े करती हैं।



आलेख 2. शिक्षा-स्वास्थ्य-आजीविका का अंतर्संबंध

1. **घुमंतू जीवनशैली और शैक्षिक निरंतरता का संकट:** घुमंतू जीवनशैली के कारण परिवारों का बार-बार स्थानांतरण होता है, जिससे बच्चों का विद्यालय में नियमित नामांकन और निरंतर अध्ययन संभव नहीं हो पाता। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के दौरान विद्यालय परिवर्तन, पाठ्यक्रम असंगति और अभिलेखीय प्रक्रियाओं की जटिलता बच्चों की सीखने की निरंतरता को बाधित करती है। परिणामस्वरूप, शिक्षा एक अस्थायी गतिविधि बन जाती है, न कि जीवन का स्थायी अंग।
2. **नामांकन, उपस्थिति एवं ड्रॉप-आउट की उच्च दर:** इन समुदायों में प्रारंभिक स्तर पर नामांकन अपेक्षाकृत होता है, किंतु नियमित उपस्थिति सुनिश्चित नहीं हो पाती। मौसमी प्रवासन, आर्थिक विवशताएँ तथा विद्यालयों की अनुकूलनहीन संरचना के कारण बच्चों का विद्यालय छोड़ देना सामान्य परिघटना बन जाती है। विशेष रूप से उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर ड्रॉप-आउट की दर अत्यधिक पाई जाती है, जिससे शिक्षा की निरंतर श्रृंखला टूट जाती है।



आलेख 3. महिलाओं के शैक्षिक स्थिति (स्रोत: विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग 2017 की रिपोर्ट)

3. **मातृभाषा-आधारित शिक्षा और सांस्कृतिक प्रासंगिकता का अभाव:** औपचारिक शिक्षा व्यवस्था प्रायः बहुसंख्यक भाषा और संस्कृति पर आधारित होती है, जिससे घुमंतू समुदायों के बच्चों को प्रारंभिक स्तर पर ही भाषा-संबंधी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। मातृभाषा-आधारित शिक्षा के अभाव में न केवल सीखने की गति प्रभावित होती है, बल्कि बच्चों में विद्यालय से भावनात्मक दूरी भी उत्पन्न होती है। पाठ्यक्रम में उनकी जीवनशैली, ज्ञान-परंपराओं और सांस्कृतिक अनुभवों का समावेश न होना शिक्षा को अप्रासंगिक बना देता है।
4. **डिजिटल विभाजन और ऑनलाइन शिक्षा से वंचना:** डिजिटल युग में शिक्षा का बढ़ता ऑनलाइन स्वरूप इन समुदायों के लिए एक नई चुनौती बनकर उभरा है।

सीमित आर्थिक संसाधन, डिजिटल उपकरणों की अनुपलब्धता, अस्थिर विद्युत आपूर्ति तथा डिजिटल साक्षरता के अभाव के कारण घुमंतू समुदायों के बच्चे ऑनलाइन शिक्षा से लगभग वंचित रह जाते हैं। इससे शैक्षिक असमानताएँ और अधिक गहरी होती जा रही हैं।

5. **बाल श्रम और पारिवारिक आजीविका में बच्चों की भागीदारी:** घुमंतू समुदायों में बच्चों की पारिवारिक आजीविका में सहभागिता एक सामाजिक-आर्थिक वास्तविकता है। पशुपालन, हस्तशिल्प, फेरी अथवा अन्य पारंपरिक व्यवसायों में बच्चों का योगदान परिवार के लिए आवश्यक माना जाता है। ऐसी स्थिति में शिक्षा को प्राथमिकता नहीं मिल पाती और बाल श्रम शिक्षा के मार्ग में एक प्रमुख अवरोध बन जाता है।

देखा जाए तो, ये सभी चुनौतियाँ संकेत देती हैं कि घुमंतू समुदायों की शिक्षा संबंधी समस्याएँ केवल संरचनात्मक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, आर्थिक और नीतिगत स्तर पर भी गहन हैं। अतः इन चुनौतियों के समाधान हेतु लचीली, समावेशी और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील शिक्षा नीतियों की आवश्यकता है, जो शिक्षा को केवल अधिकार नहीं, बल्कि उनके जीवन-संदर्भों से जुड़ा एक सशक्त साधन बना सकें।

तालिका 1. शैक्षिक चुनौतियाँ बनाम समाधान

| क्र. स. | चुनौतियाँ | समाधान |
|---------|-------------------|--------------------------|
| 1. | प्रवासशील जीवन | मोबाइल स्कूल/ओपन लर्निंग |
| 2. | भाषाई अवरोध | मातृभाषा आधारित शिक्षा |
| 3. | डिजिटल वंचना | सामुदायिक डिजिटल केंद्र |
| 4. | दस्तावेजों की कमी | लचीली प्रवेश नीति |

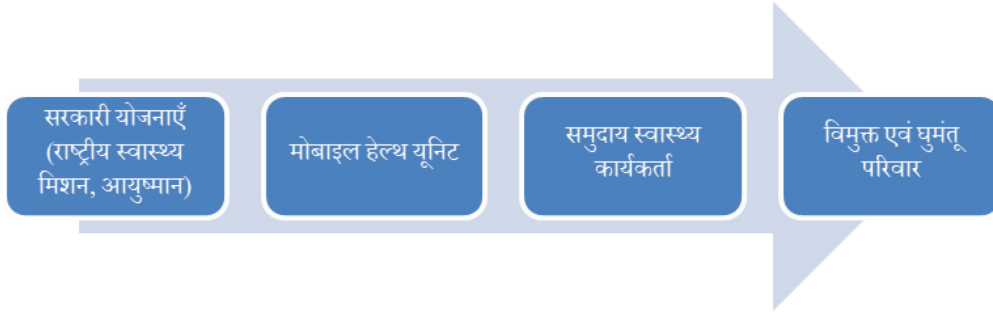
स्वास्थ्यगत समस्याएँ और सेवाओं की सीमाएँ

घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों की स्वास्थ्य स्थिति उनके अस्थिर जीवन-पर्यावरण, सामाजिक बहिष्करण तथा औपचारिक सेवाओं से दूरी का प्रत्यक्ष प्रतिबिंब है। स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ यहाँ केवल चिकित्सकीय मुद्दे नहीं, बल्कि संरचनात्मक असमानताओं और नीतिगत उपेक्षा का परिणाम हैं।

1. **प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित या शून्य पहुँच:** घुमंतू समुदायों की गतिशील जीवनशैली के कारण प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, उप-केंद्र एवं सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं तक उनकी पहुँच अत्यंत सीमित रहती है। स्थायी निवास प्रमाण के अभाव में पंजीकरण और अनुवर्ती उपचार संभव नहीं हो पाता। परिणामस्वरूप, रोगों की प्रारंभिक पहचान और समय पर उपचार बाधित होता है।
2. **कुपोषण, एनीमिया एवं संक्रामक रोगों की अधिकता:** अपर्याप्त और असंतुलित आहार, खाद्य सुरक्षा का अभाव तथा गरीबी इन समुदायों में कुपोषण और एनीमिया की उच्च दर के प्रमुख कारण हैं। इसके साथ ही अस्वच्छ वातावरण, सुरक्षित पेयजल की कमी और भीड़भाड़ वाली अस्थायी बस्तियों के कारण संक्रामक रोग जैसे डायरिया, टीबी, त्वचा रोग और श्वसन संक्रमण तेजी से फैलते हैं।



- 3 **मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य से जुड़े गंभीर जोखिम:** घुमंतू महिलाओं को गर्भावस्था के दौरान नियमित प्रसवपूर्व जाँच, सुरक्षित प्रसव और प्रसवोत्तर देखभाल जैसी आवश्यक सेवाएँ उपलब्ध नहीं हो पातीं। संस्थागत प्रसव की न्यूनता, प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मियों की अनुपस्थिति और पोषण पूरक आहार के अभाव के कारण मातृ एवं शिशु मृत्यु दर अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है।
- 4 **टीकाकरण, पोषण योजनाओं एवं स्वास्थ्य बीमा से वंचना:** टीकाकरण कार्यक्रमों में निरंतरता की कमी, पहचान-पत्रों का अभाव और प्रवासी प्रकृति के कारण बच्चों का पूर्ण टीकाकरण सुनिश्चित नहीं हो पाता। इसी प्रकार, एकीकृत बाल विकास सेवा योजना, पोषण अभियान तथा आयुष्मान भारत जैसी स्वास्थ्य बीमा योजनाओं का लाभ भी इन समुदायों तक सीमित रूप से पहुँचता है, जिससे स्वास्थ्य सुरक्षा का दायरा और संकुचित हो जाता है।
- 5 **स्वच्छ जल, स्वच्छता एवं आवासीय असुरक्षा:** स्वच्छ पेयजल, शौचालय और सुरक्षित आवास का अभाव घुमंतू समुदायों के स्वास्थ्य संकट को और गहरा करता है। खुले में शौच, असुरक्षित जल स्रोतों का उपयोग और अस्थायी आवासीय संरचनाएँ संक्रमण और पर्यावरणीय रोगों के जोखिम को बढ़ाती हैं। आवासीय असुरक्षा मानसिक स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव डालती है।
घुमंतू समुदायों की स्वास्थ्यगत समस्याएँ व्यक्तिगत स्तर से अधिक सामुदायिक और संरचनात्मक हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए मोबाइल स्वास्थ्य इकाइयों, पोर्टेबल स्वास्थ्य पहचान, समावेशी सार्वजनिक स्वास्थ्य योजनाओं और अंतर-क्षेत्रीय समन्वय की आवश्यकता है, ताकि स्वास्थ्य सेवाएँ उनके जीवन-यथार्थ के अनुरूप सुलभ, सतत और प्रभावी बन सकें।



आलेख 4. स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच का मॉडल

आजीविका एवं आर्थिक चुनौतियाँ

घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों की आर्थिक स्थिति उनके सामाजिक बहिष्करण, परंपरागत जीवन-शैली में आए परिवर्तनों तथा नीतिगत उपेक्षा से गहराई से प्रभावित है। आजीविका से जुड़ी चुनौतियाँ केवल आय अर्जन तक सीमित नहीं, बल्कि सम्मानजनक जीवन, सामाजिक सुरक्षा और भविष्य की आर्थिक स्थिरता से भी जुड़ी हुई हैं।

- 1 **परंपरागत पेशों का क्षरण:** कलाबाजी, पशुपालन, लोक-हस्तशिल्प, फेरी, मनोरंजन एवं पारंपरिक सेवाओं पर आधारित आजीविकाएँ आधुनिक अर्थव्यवस्था, शहरीकरण और तकनीकी परिवर्तन के कारण धीरे-धीरे अप्रासंगिक होती जा रही हैं। बाजार की बदलती मांग, संरक्षण के अभाव और औपचारिक मान्यता न मिलने से ये पेशे स्थायी आय का साधन नहीं रह गए हैं, जिससे समुदायों की आर्थिक आत्मनिर्भरता कमजोर हुई है।
- 2 **अनौपचारिक क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भरता एवं आय की अस्थिरता:** औपचारिक रोजगार के अवसरों और शैक्षिक योग्यताओं के अभाव में अधिकांश घुमंतू समुदाय अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने को विवश हैं। दैनिक मजदूरी, मौसमी कार्य और अस्थायी रोजगार आय में निरंतर अस्थिरता पैदा करते हैं, जिससे बचत, निवेश और सामाजिक सुरक्षा की संभावनाएँ लगभग समाप्त हो जाती हैं।
- 3 **भूमि अधिकारों और संपत्ति स्वामित्व का अभाव:** स्थायी निवास और भूमि स्वामित्व के अभाव में ये समुदाय आवासीय सुरक्षा, कृषि आधारित आजीविका और सरकारी योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाते हैं। भूमि अधिकारों की कमी न केवल आर्थिक असुरक्षा को बढ़ाती है, बल्कि पहचान, सम्मान और राजनीतिक प्रतिनिधित्व पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है।
- 4 **कौशल विकास, ऋण एवं वित्तीय समावेशन की कमी:** कौशल उन्नयन कार्यक्रम, स्वरोजगार प्रशिक्षण, बैंकिंग सेवाएँ और औपचारिक ऋण तक सीमित पहुँच इन समुदायों की आर्थिक उन्नति में एक बड़ी बाधा है। वित्तीय साक्षरता के अभाव में वे साहूकारों और अनौपचारिक ऋण स्रोतों पर निर्भर हो जाते हैं, जहाँ उच्च ब्याज दरें आर्थिक शोषण को जन्म देती हैं।
- 5 **प्रवास, ऋणग्रस्तता और पीढ़ीगत गरीबी:** रोजगार की तलाश में निरंतर प्रवास, अस्थिर आय और ऋणग्रस्तता एक दुष्चक्र का निर्माण करती है, जिसमें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक गरीबी स्थानांतरित होती रहती है। शिक्षा, स्वास्थ्य और कौशल में निवेश न हो पाने के कारण यह चक्र टूट नहीं पाता और सामाजिक-आर्थिक हाशियाकरण स्थायी रूप ले लेता है।



सत्यमेव जयते



- 6 घुमंतू समुदायों की आजीविका संबंधी चुनौतियाँ बहुआयामी और संरचनात्मक हैं। इनके समाधान के लिए परंपरागत पेशों के पुनरुद्धार, बाजार-संयोजन, कौशल-आधारित प्रशिक्षण, वित्तीय समावेशन और सामाजिक सुरक्षा को केंद्र में रखकर समावेशी आर्थिक नीतियों की आवश्यकता है, ताकि ये समुदाय सम्मानजनक और टिकाऊ आजीविका की ओर अग्रसर हो सकें।

लैंगिक दृष्टिकोण और अंतर्विभागीय चुनौतियाँ

घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के भीतर लैंगिक असमानताएँ सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक वंचनाओं के साथ अंतर्विभागीय रूप में जुड़ी हुई हैं। यहाँ महिलाओं और बालिकाओं की स्थिति केवल लैंगिक भेदभाव तक सीमित नहीं, बल्कि जाति, वर्ग, प्रवासन, गरीबी और पहचान-विहीनता जैसे कारकों के साथ मिलकर उनकी वंचना को और अधिक गहन बना देती है।

- 1 *महिलाओं और बालिकाओं की दोहरीधतिहरी वंचना:* इन समुदायों की महिलाएँ एक साथ कई स्तरों पर वंचना का अनुभव करती हैं, घुमंतू पहचान के कारण सामाजिक बहिष्करण, गरीबी के कारण आर्थिक निर्भरता और पितृसत्तात्मक संरचनाओं के कारण लैंगिक असमानता। बालिकाओं के संदर्भ में यह वंचना और भी तीव्र हो जाती है, जहाँ शिक्षा, पोषण और स्वास्थ्य में प्राथमिकता प्रायः बालकों को दी जाती है।
- 2 *शिक्षा एवं स्वास्थ्य में लैंगिक असमानताएँ:* बालिकाओं की विद्यालय तक पहुँच और निरंतरता बालकों की तुलना में अधिक सीमित रहती है। घरेलू कार्य, छोटे भाई-बहनों की देखभाल और पारिवारिक आजीविका में योगदान के कारण उनकी शिक्षा अक्सर बाधित हो जाती है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी महिलाओं की विशिष्ट आवश्यकताएँ जैसे प्रजनन स्वास्थ्य, मासिक धर्म स्वच्छता और पोषण अपर्याप्त सेवाओं और सामाजिक वर्जनाओं के कारण उपेक्षित रह जाती हैं।
- 3 *बाल विवाह, असुरक्षित श्रम और मानव तस्करी के जोखिम:* आर्थिक असुरक्षा, सामाजिक संरक्षण की कमी और शिक्षा से वंचना के कारण बाल विवाह की प्रवृत्ति इन समुदायों में अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। कम उम्र में विवाह बालिकाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा और आत्मनिर्भरता पर दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव डालता है। इसके अतिरिक्त, असंगठित और असुरक्षित श्रम क्षेत्रों में महिलाओं और बालिकाओं की भागीदारी उन्हें शोषण, हिंसा और मानव तस्करी जैसे गंभीर जोखिमों के प्रति संवेदनशील बनाती है।

लैंगिक दृष्टिकोण से घुमंतू समुदायों की चुनौतियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि सामान्य कल्याणकारी नीतियाँ इनके लिए पर्याप्त नहीं हैं। आवश्यकता ऐसी लैंगिक-संवेदनशील और अंतर्विभागीय नीतियों की है, जो महिलाओं और बालिकाओं को केवल लाभार्थी नहीं, बल्कि अधिकारधारी और सशक्त सामाजिक अभिकर्ता के रूप में स्थापित कर सकें।

राज्यों में विद्यमान कार्यक्रमों एवं नीतियों का समग्र अवलोकन

वर्ष 1952 में आपराधिक जनजाति अधिनियम के निरस्त होने के बाद से केंद्र तथा राज्य सरकारों द्वारा विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के हाशियाकरण की समस्या को दूर करने के लिए निरंतर प्रयास किए गए हैं। इन प्रयासों के अंतर्गत विभिन्न कल्याणकारी योजनाएँ प्रारंभ की गईं, जिनका उद्देश्य इन समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को समानता एवं सतत विकास के आधार पर सुदृढ़ करना रहा है। कुछ राज्यों जैसे महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, तमिलनाडु आदि ने इन समुदायों के कल्याण हेतु विशेष योजनाएँ तैयार कर प्रभावी रूप से लागू की हैं, जिसके परिणामस्वरूप इन राज्यों में विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों की आर्थिक स्थिति में कुछ सकारात्मक एवं प्रत्यक्ष परिवर्तन देखने को मिले हैं। इसके विपरीत, अनेक अन्य राज्यों में विद्यमान योजनाएँ इन समुदायों के बहुसंख्यक वर्ग तक नहीं पहुँच पाईं, जिसके कारण ये समुदाय आज भी समाज की मुख्यधारा से बाहर, हाशिये पर जीवन व्यतीत कर रहे हैं और प्रायः अदृश्य बने हुए हैं। वर्ष 2014-15 से केंद्र सरकार द्वारा विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए दो विशिष्ट योजनाएँ लागू की गईं हैं। इन योजनाओं का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है-

- 1 विमुक्त एवं घुमंतू जनजातियों के लिए केंद्र सरकार की योजनाएँ

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय द्वारा दो प्रमुख योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है, जिनका उद्देश्य उन विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए केन्द्रित हस्तक्षेप करना है, जो अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति अथवा अन्य पिछड़ा वर्ग की सूची में सम्मिलित नहीं हैं, ताकि उनका सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जा सके।

- i. डॉ. अम्बेडकर प्री-मैट्रिक एवं पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना (विमुक्त जनजातियों हेतु)

वे विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियाँ, जिनकी वार्षिक पारिवारिक आय 2.0 लाख रुपये से कम है, इस योजना के अंतर्गत प्री-मैट्रिक एवं पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति के लिए पात्र हैं। इस योजना के अंतर्गत केंद्र एवं राज्य सरकार के बीच वित्तीय भागीदारी अनुपात 75:25 निर्धारित किया गया है। छात्रवृत्ति की दरें इस प्रकार हैं- कक्षा I से VIII तक: ₹1000 प्रति छात्र (10 माह के लिए), कक्षा IX एवं X: ₹1500 प्रति छात्र (10 माह के लिए) पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति की राशि: स्कॉलर (दिवा छात्र): ₹550 प्रति माह, छात्रावास में रहने वाले छात्र: ₹1200 प्रति माह तक

- ii. नानाजी देशमुख योजना: विमुक्त एवं घुमंतू जनजाति के बालक एवं बालिकाओं हेतु छात्रावास निर्माण

यह योजना विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के बालकों एवं बालिकाओं के लिए छात्रावास निर्माण से संबंधित है, जिसे राज्य सरकारों/केंद्र शासित प्रदेश प्रशासन के माध्यम



से लागू किया जाता है। इस योजना के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा पूरे देश में प्रति वर्ष अधिकतम 500 सीटों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। छात्रावास निर्माण हेतु: ₹3 लाख प्रति सीट, फर्नीचर हेतु: ₹5,000 प्रति सीट यह वित्तीय सहायता राज्य सरकारों/केंद्र शासित प्रदेश प्रशासन/विश्वविद्यालयों/महाविद्यालयों को प्रदान की जाती है, ताकि विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों से संबंधित विद्यार्थियों की आवासीय एवं शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके। इस योजना में भी केंद्र एवं राज्य के बीच वित्तीय अनुपात 75:25 निर्धारित किया गया है।

2 राज्य सरकारों की योजनाएँ

यद्यपि विभिन्न राज्यों द्वारा विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों के उत्थान हेतु अनेक योजनाएँ प्रारंभ की गई हैं, तथापि इनमें से अधिकांश योजनाएँ ठोस एवं व्यापक परिवर्तन लाने में अब तक सक्षम सिद्ध नहीं हो पाई हैं। इसके बावजूद, इन समुदायों के लिए संचालित राज्य-स्तरीय पहलों को समझने के उद्देश्य से कुछ प्रमुख राज्यों तथा उनकी योजनाओं का संक्षिप्त अवलोकन करना उपयोगी होगा।

तालिका 2. विभिन्न राज्य सरकारों की योजनाएँ

| क्र. स. | राज्य | योजनाएँ |
|---------|--------------|--|
| 1. | महाराष्ट्र | <ul style="list-style-type: none"> 25% मार्जिन मनी ऋण योजना मोटर ड्राइविंग प्रशिक्षण योजना सावित्रीबाई फुले छात्रवृत्ति योजना (बालिकाओं हेतु) माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत मेधावी विद्यार्थियों हेतु छात्रवृत्ति उच्च विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों हेतु शिक्षण एवं परीक्षा शुल्क सहायता आईटीआई में अध्ययनरत विद्यार्थियों को वजीफा युवाओं हेतु व्यावसायिक प्रशिक्षण योजना अंतर-जातीय विवाह को प्रोत्साहन हेतु प्रोत्साहन योजना वसंतराव नाइक टांडा/बस्ती विकास योजना यशवंतराव चव्हाण मुक्त वसाहत योजना |
| 2. | गुजरात | <ul style="list-style-type: none"> प्री-एसएससी छात्रवृत्ति योजना स्ववित्तपोषित संस्थानों में अध्ययनरत घुमंतू/विमुक्त जनजाति विद्यार्थियों हेतु सहायता टैलेंट पूल योजना कक्षा XI-XII (विज्ञान वर्ग) के विद्यार्थियों हेतु निजी ट्यूशन सहायता यूनिफॉर्म सहायता योजना |
| 3. | मध्य प्रदेश | <ul style="list-style-type: none"> विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजाति रोजगार योजना विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजाति आवास योजना जाबली योजना (वेश्यावृत्ति उन्मूलन हेतु) प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना सामुदायिक विकास कार्यक्रम: सार्वजनिक शौचालयों की स्थापना, जल निकासी व्यवस्था में सुधार, सुरक्षित पेयजल की सुलभता, अन्य आधारभूत नागरिक सुविधाएँ |
| 4. | हरियाणा | <ul style="list-style-type: none"> अनुसूचित जाति एवं विमुक्त जातियों हेतु विधिक सहायता योजना |
| 5. | राजस्थान | <ul style="list-style-type: none"> गाडिया लोहार योजना |
| 6. | कर्णाटक | <ul style="list-style-type: none"> प्री-मैट्रिक विद्यार्थियों हेतु विशेष प्रोत्साहन आश्रम शालाओं का संचालन एवं अनुरक्षण प्रतिष्ठित विद्यालयों में प्रवेश सुविधा डी. देवराज उर्स विकास निगम के माध्यम से लागू कार्यक्रम: गंगा कल्याण योजना (सिंचाई कार्यक्रम), स्वरोजगार प्रशिक्षण एवं सब्सिडी योजना, भूमि स्वामित्व कार्यक्रम, शिक्षा ऋण योजना आवासीय सुविधाएँ कॉलोनियों में आधारभूत ढाँचागत सुविधाओं का विकास |
| 7. | तमिलनाडु | <ul style="list-style-type: none"> विमुक्त समुदाय विद्यार्थियों हेतु छात्रावास सुविधा मुख्यमंत्री मेधावी पुरस्कार योजना निःशुल्क साइकिल वितरण योजना थंधई पेरियार स्मारक पुरस्कार सरकारी विद्यालयों से कक्षा 10 उत्तीर्ण एवं श्रेष्ठ निजी विद्यालयों में उच्च माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों हेतु वित्तीय सहायता |
| 8. | उत्तर प्रदेश | <ul style="list-style-type: none"> आश्रम पद्धति विद्यालय योजना विमुक्त जनजातियों हेतु औद्योगिक प्रशिक्षण केंद्र |

सरकारी नीतियाँ, योजनाएँ और उनकी सीमाएँ

घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त जनजातियों के कल्याण हेतु भारत सरकार द्वारा समय-समय पर विभिन्न आयोगों, द्वारा योजनाओं और नीतिगत प्रावधानों की घोषणा की गई है। तथापि, नीतिगत मंशा और जमीनी वास्तविकता के बीच एक स्पष्ट अंतर दिखाई देता है, जिसके कारण ये समुदाय अपेक्षित लाभों से वंचित रह जाते हैं।

- 1 *आयोगों की सिफारिशों का आंशिक क्रियान्वयन:* इडाते आयोग, रेनके आयोग तथा राष्ट्रीय विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजाति आयोग जैसे निकायों ने शिक्षा, आजीविका, आवास, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा से संबंधित महत्वपूर्ण सिफारिशें प्रस्तुत की हैं। किंतु इन सिफारिशों का क्रियान्वयन प्रायः आंशिक, असंगत और राज्यों के विवेक पर निर्भर रहा है। परिणामस्वरूप, नीतिगत निरंतरता और जवाबदेही का अभाव बना हुआ है।
- 2 *एस सी/एस टी/ओ बी सी वर्गीकरण में अस्पष्टता:* कई घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त समुदायों की स्थिति अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग की श्रेणियों में स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं है। विभिन्न राज्यों में एक ही समुदाय का भिन्न-भिन्न वर्गीकरण पाया जाता है, जिससे वे आरक्षण, छात्रवृत्ति और कल्याणकारी योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाते हैं। यह वर्गीकरणीय अस्पष्टता नीतिगत समावेशन में एक बड़ी बाधा है।
- 3 *लक्षित योजनाओं की अनुपलब्धता या कमजोर पहुँच:* हालाँकि कुछ योजनाएँ कागजों पर घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त समुदायों के लिए उपलब्ध हैं, परंतु उनकी जानकारी, पहुँच और कार्यान्वयन अत्यंत सीमित है। लक्षित हस्तक्षेपों के अभाव में ये समुदाय सामान्य गरीबी-उन्मुख योजनाओं पर निर्भर रहते हैं, जो उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं जैसे गतिशील जीवनशैली और पहचान-विहीनता को संबोधित नहीं कर पातीं।
- 4 *पहचान दस्तावेजों की समस्या:* आधार कार्ड, राशन कार्ड, जाति प्रमाणपत्र और निवास प्रमाण जैसे दस्तावेज अधिकांश सरकारी योजनाओं की पूर्वशर्त हैं। घुमंतू जीवनशैली, स्थायी पते के अभाव और प्रशासनिक जटिलताओं के कारण घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त समुदायों के लिए इन दस्तावेजों को प्राप्त करना कठिन हो जाता है। परिणामस्वरूप, वे अदृश्य नागरिक की स्थिति में फँस जाते हैं और कल्याणकारी राज्य की पहुँच से बाहर रह जाते हैं।

घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त समुदायों से संबंधित सरकारी नीतियों की सबसे बड़ी सीमा उनकी असंवेदनशील संरचना और कमजोर कार्यान्वयन है। जब तक नीतियाँ लचीली, लक्षित और पहचान-आधारित बाधाओं से मुक्त नहीं होंगी, तब तक ये समुदाय विकास की मुख्यधारा से जुड़े नहीं जा सकेंगे। अतः एक समन्वित, अधिकार-आधारित और समुदाय-केंद्रित नीति ढाँचे की तत्काल आवश्यकता है।

नागरिक समाज और गैर-सरकारी प्रयास

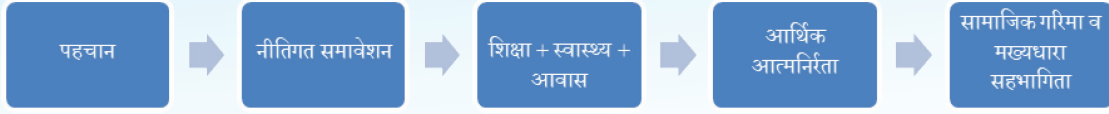
घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त जनजातियों के संदर्भ में जहाँ राज्य की नीतियाँ और योजनाएँ अनेक सीमाओं से घिरी हुई हैं, वहीं नागरिक समाज और गैर-सरकारी संगठन इन समुदायों तक पहुँच बनाने में एक सेतु की भूमिका निभाते हैं। ये प्रयास प्रायः अधिक लचीले, समुदाय-संवेदी और जमीनी यथार्थ से जुड़े होते हैं।

- 1 *गैर-सरकारी संगठन एवं समुदाय-आधारित संगठनों की भूमिका:* गैर-सरकारी संगठन, स्वयंसेवी समूह और समुदाय-आधारित संगठन घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त समुदायों के साथ विश्वास-निर्माण, जागरूकता और अधिकार-शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संगठन दस्तावेजीकरण, पहचान-पत्र प्राप्ति, कानूनी सहायता तथा सरकारी योजनाओं से जोड़ने में सहायक होते हैं। साथ ही, ये समुदाय की आवाज को नीति-निर्माण के मंचों तक पहुँचाने का कार्य भी करते हैं।
- 2 *वैकल्पिक विद्यालय एवं मोबाइल स्वास्थ्य इकाइयाँ:* घुमंतू जीवनशैली को ध्यान में रखते हुए कई गैर-सरकारी संगठनों ने वैकल्पिक, लचीले और अनौपचारिक शिक्षा मॉडल विकसित किए हैं जैसे मोबाइल स्कूल, मौसमी आवासीय विद्यालय और बहु-स्तरीय शिक्षण केंद्र। इसी प्रकार, मोबाइल स्वास्थ्य इकाइयाँ, स्वास्थ्य शिविर और सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं, टीकाकरण और पोषण परामर्श को समुदाय के द्वार तक पहुँचाने में प्रभावी सिद्ध हुए हैं।
- 3 *आजीविका-आधारित हस्तक्षेप एवं सामुदायिक सशक्तीकरण:* नागरिक समाज के प्रयास केवल सेवा-प्रदान तक सीमित नहीं रहते, बल्कि आजीविका के वैकल्पिक और टिकाऊ साधनों के विकास पर भी केंद्रित होते हैं। कौशल प्रशिक्षण, स्वयं सहायता समूह, सूक्ष्म उद्यम, हस्तशिल्प का बाजार-संयोजन और वित्तीय साक्षरता जैसे हस्तक्षेप समुदाय की आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देते हैं। इसके साथ ही, सामुदायिक नेतृत्व विकास और महिलाओं के सशक्तीकरण पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

नागरिक समाज और गैर-सरकारी प्रयास घुमंतू समुदायों के लिए नवाचार, समावेशन और सशक्तीकरण के महत्वपूर्ण मंच प्रदान करते हैं। हालाँकि इन प्रयासों का दायरा सीमित हो सकता है, फिर भी वे यह दर्शाते हैं कि समुदाय-केंद्रित, लचीले और सहभागी मॉडल राज्य-स्तरीय नीतियों के पूरक के रूप में प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं।

मुख्यधारा में समावेशन की रणनीतियाँ

घुमंतू, अर्ध-घुमंतू एवं विमुक्त जनजातियों का सतत और सम्मानजनक समावेशन केवल कल्याणकारी हस्तक्षेपों से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए ऐसी बहुआयामी रणनीतियों की आवश्यकता है जो उनकी जीवन-शैली, सांस्कृतिक पहचान और गतिशीलता को ध्यान में रखते हुए विकास के अवसर प्रदान करें।



आलेख 5. मुख्यधारा समावेशन की रणनीति

- 1 लचीली एवं मोबाइल शिक्षा प्रणाली: घुमंतू समुदायों की गतिशील जीवनशैली के अनुरूप लचीली शिक्षा व्यवस्थाएँ विकसित करना आवश्यक है। मोबाइल विद्यालय, मौसमी आवासीय छात्रावास, ब्रिज कोर्स और मल्टी-एंट्री-मल्टी-एग्जिट शैक्षिक ढाँचे बच्चों की सीखने की निरंतरता सुनिश्चित कर सकते हैं। मातृभाषा-आधारित और सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक पाठ्यक्रम शिक्षा को समुदाय के लिए अर्थपूर्ण और स्वीकार्य बनाते हैं।
- 2 समुदाय-आधारित स्वास्थ्य मॉडल: समावेशन के लिए स्वास्थ्य सेवाओं का समुदाय-केंद्रित और पोर्टेबल होना अनिवार्य है। मोबाइल स्वास्थ्य इकाइयाँ, प्रशिक्षित सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता, पोर्टेबल स्वास्थ्य रिकॉर्ड और प्रवासी-अनुकूल प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएँ इन समुदायों की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रभावी समाधान प्रस्तुत करती हैं। इससे निवारक, प्राथमिक और मातृ-शिशु स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच में सुधार संभव है।
- 3 कौशल-आधारित एवं स्थानीय आजीविका विकास: आजीविका के क्षेत्र में रणनीति का केंद्र कौशल उन्नयन, स्थानीय संसाधनों का उपयोग और बाजार से जुड़ाव होना चाहिए। परंपरागत ज्ञान और कौशल को आधुनिक बाजार की मांग से जोड़ना, प्रमाणन-आधारित प्रशिक्षण, सूक्ष्म उद्यमिता और वित्तीय समावेशन से आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया जा सकता है। इससे अनौपचारिक और अस्थिर रोजगार से बाहर निकलने के अवसर सृजित होते हैं।
- 4 सांस्कृतिक पहचान के साथ सामाजिक समावेशन: मुख्यधारा में समावेशन का अर्थ सांस्कृतिक एकरूपता नहीं, बल्कि विविधता के साथ सह-अस्तित्व है। घुमंतू समुदायों की सांस्कृतिक पहचान, परंपराओं और ज्ञान-प्रणालियों को सम्मान और मान्यता देना सामाजिक समावेशन की आधारशिला है। सार्वजनिक विमर्श, पाठ्यक्रम, मीडिया और सांस्कृतिक मंचों में उनकी सकारात्मक प्रस्तुति सामाजिक स्वीकृति और आत्मसम्मान को सुदृढ़ करती है।

मुख्यधारा में समावेशन की रणनीतियाँ तभी प्रभावी होंगी जब वे अधिकार-आधारित, सहभागी और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील हों। शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका और सांस्कृतिक मान्यता के समन्वित प्रयास ही घुमंतू समुदायों को विकास की प्रक्रिया में समान भागीदार बना सकते हैं।

निष्कर्षात्मक विमर्श

विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू समुदायों का प्रश्न केवल एक विशिष्ट सामाजिक समूह के कल्याण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारतीय लोकतंत्र, समावेशी विकास और सामाजिक न्याय

की वास्तविक कसौटी है। ऐतिहासिक बहिष्करण, औपनिवेशिक विरासत और निरंतर नीतिगत उपेक्षा ने इन समुदायों को विकास की मुख्यधारा से दूर रखा है। ऐसे में इनका समावेशन किसी वैकल्पिक एजेंडा का नहीं, बल्कि संवैधानिक मूल्यों की पूर्ति का प्रश्न बन जाता है। सबसे पहले, विमुक्त एवं घुमंतू समुदायों का विकास सामाजिक न्याय की कसौटी इस अर्थ में है कि यह दर्शाता है कि राज्य और समाज सबसे हाशिए पर खड़े नागरिकों तक अधिकार, अवसर और सम्मान कितनी प्रभावी ढंग से पहुँचा पाते हैं। यदि विकास की प्रक्रिया इन समुदायों को शामिल नहीं कर पाती, तो समग्र राष्ट्रीय प्रगति का दावा अधूरा रह जाता है। दूसरे, शिक्षा-स्वास्थ्य-आजीविका का समन्वित दृष्टिकोण इस संदर्भ में अनिवार्य है। शिक्षा बिना स्वास्थ्य और आजीविका के टिकाऊ नहीं हो सकती, और आजीविका बिना शिक्षा एवं स्वास्थ्य निवेश के स्थिर नहीं रह सकती। अतः खंडित, विभागीय हस्तक्षेपों के स्थान पर बहु-क्षेत्रीय, जीवन-चक्र आधारित और समुदाय-केंद्रित रणनीतियों की आवश्यकता है, जो इन तीनों क्षेत्रों को एक साथ संबोधित करें। नीति, शोध और व्यवहार के बीच सेतु की आवश्यकता इस विमर्श का केंद्रीय निष्कर्ष है। अकादमिक शोध इन समुदायों की वास्तविकताओं को समझने का आधार प्रदान करता है, नीतियाँ उस समझ को संस्थागत ढाँचे में रूपांतरित करती हैं, और व्यवहार उसे जमीनी स्तर पर मूर्त रूप देता है। इन तीनों के बीच संवाद और समन्वय के अभाव में सबसे अच्छी नीतियाँ भी निष्प्रभावी सिद्ध होती हैं। विमुक्त और घुमंतू समुदायों का सशक्तीकरण तभी संभव है जब विकास को अधिकार-आधारित, सहभागी और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाए। यही दृष्टि न केवल इन समुदायों के जीवन में परिवर्तन ला सकती है, बल्कि भारतीय समाज को अधिक न्यायपूर्ण, समावेशी और मानवीय बनाने की दिशा में भी एक निर्णायक कदम सिद्ध हो सकती है।

सन्दर्भ

- अम्बेडकर, भीमराव रामजी. (1948). *राज्य और अल्पसंख्यक*. भारत सरकार अभिलेखागार
- कुमार, वी. (2018). *भारत में विमुक्त जनजातियाँ: ऐतिहासिक अन्याय और समकालीन चुनौतियाँ*. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 53(32), 45-52
- देसाई, ए. आर. (2010). *भारत में ग्रामीण समाजशास्त्र*. पॉपुलर प्रकाशन, मुंबई
- ट्रेज, जीन, एवं सेन, अमर्त्य. (2013). *अनिश्चित गौरव: भारत और उसके अंतर्विरोध*. पेंगुइन बुक्स, नई दिल्ली
- नीति आयोग. (2021). *भारत में वंचित समुदायों का सामाजिक समावेशन*. भारत सरकार, नई दिल्ली

बाविस्कर, बी. एस., एवं एटवुड, डी. डब्ल्यू. (2013). *आधुनिक भारत में जाति और सामाजिक बहिष्करण*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली

भारत सरकार. (1952). *आपराधिक जनजाति अधिनियम, 1871 का निरसन*. भारत का राजपत्र, नई दिल्ली

भारत सरकार. (2008). *विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों की स्थिति पर राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट (बालकृष्ण रेंके आयोग)*. सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली

भारत सरकार. (2014). *इडाते आयोग की रिपोर्ट: विमुक्त एवं घुमंतू जनजातियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति*. सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली

भारत सरकार. (2017). *विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट*. सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली

यूनिसेफ इंडिया. (2016). *प्रवासी एवं घुमंतू समुदायों के बच्चे: समस्याएँ और चुनौतियाँ*. नई दिल्ली

योजना आयोग, भारत सरकार. (2011). *सामाजिक रूप से*

बहिष्कृत समुदायों पर कार्य समूह की रिपोर्ट. नई दिल्ली

राव, एस. (2015). *भारत के घुमंतू: सामाजिक बहिष्करण और विकास*. रावत पब्लिकेशंस, जयपुर

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस-5). (2019-21). *भारत तथ्य पत्रक*. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार

राष्ट्रीय विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजाति आयोग. (2015). *पृष्ठभूमि विवरण एवं कार्यादेश*. भारत सरकार

शाह, घनश्याम; मांडेर, हर्ष; थोरेट, सुखदेव; देशपांडे, सतीश; एवं बाविस्कर, अमिता. (2006). *ग्रामीण भारत में अस्पृश्यता*. सेज पब्लिकेशंस, नई दिल्ली

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार. (2018). *विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों के कल्याण हेतु योजनाएँ*. नई दिल्ली


सेन, अमर्त्य. (1999). *स्वतंत्रता के रूप में विकास*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

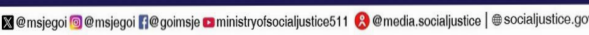
पीएम-अजय:

अनुसूचित जाति समुदायों को सशक्त बनाना

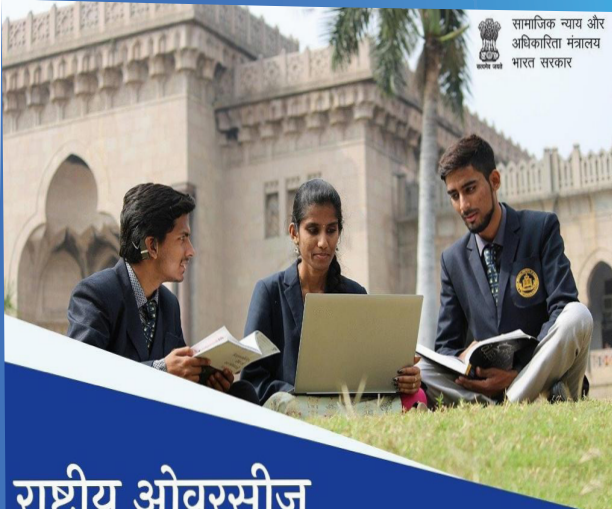
- इसके अंतर्गत कौशल विकास और आय के अवसर प्रदान किए जाते हैं
- अनुसूचित जाति बहुल गांवों में बेहतर बुनियादी ढांचा उपलब्ध कराया जाता है
- छात्रावासों और आवासीय विद्यालयों के साथ शिक्षा उपलब्ध करायी जाती है



अधिक जानकारी के लिए <https://pmajay.dosje.gov.in> पर विजिट करें



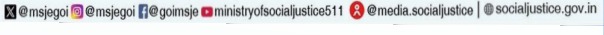
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार



राष्ट्रीय ओवरसीज छात्रवृत्ति (एनओएस)

- ▶ यह विदेश में अध्ययन- स्नातकोत्तर/ पीएचडी करने के लिए है
- ▶ इसके अंतर्गत प्रत्येक वर्ष 125 छात्रवृत्तियां प्रदान की जाती हैं
- ▶ इसमें महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत सीटें आरक्षित होती हैं
- ▶ यह अनुसूचित जाति, डीएनटी, घुमंतू जनजातियों, भूमिहीन मजदूरों और कारीगरों के लिए है

nosmsje.gov.in पर आवेदन करें





Empowering the Most Vulnerable: Policy Interventions and Livelihood Transformation of Yerukala Tribal Women in Andhra Pradesh

Dr. D. Chandramouli Reddy

Abstract

The Yerukala tribe is a tribally marginalized Scheduled Tribe group in Andhra Pradesh with the colonial baggage of being demarcated, as an inherently criminal group, under the Criminal Tribes Act of 1871. Even though they have been denied status through denotification, the Yerukala women are still highly vulnerable due to their tribal identity and gender discrimination, poverty, and social exclusion. The chapter is a critical assessment of the multidimensional policy interventions used by the Government of India and the state government of Andhra Pradesh to emphasize the socio-economic empowerment of Yerukala tribal women. This study, using secondary data sources such as Census reports, Census Tribal Welfare Department statistics, and empirical surveys, examines the efficacy of such programs as Self-Help Group mobilization, National Rural Livelihood Mission, the programs of the Integrated Tribal Development Agency, and the Scheme of Economic Empowerment of DNTs. The analysis indicates that even though policy frameworks have established institutional arrangements of livelihood diversification, they still have huge gaps in implementation, creating awareness, and dealing with structural constraints. The results highlight the need to have culturally appropriate and gender sensitive interventions that acknowledge the traditional knowledge systems of the Yerukala women as they work towards sustainable livelihoods and recognition in the developmental agenda.

Keywords Yerukala tribe, Denotified tribes, tribal Women empowerment, Livelihood transformation, Self-help groups, policy interventions, Andhra Pradesh, Scheduled Tribes, social inclusion, gender development.

Introduction

One of the socially and economically disadvantaged groups of society is the tribal population of India, which comprises around 8.6 percent of the total population based on the 2011 Census. The Denotified Tribes (DNTs) have a very vulnerable status within these communities as they still have to carry the historical weight of criminalization of the colonials, which is still reflected in the modern forms of social stigmatization and economic marginalization (Radhakrishna, 2001). The Yerukala tribe, a Scheduled Tribe in Andhra Pradesh and Telangana, is a typical example of a complicated history of being oppressed and having developmental issues that remain thinking through the present.

The Yerukala community is self-named Kurru, which is a Telugu word, Eruka chepputa, meaning the traditional profession of their women, fortune-telling (Thurston and Rangachari, 1909). The Yerukala tribe is still one of the most educationally and economically backward peoples in the area, with the level of literacy standing at 48.12 percent and a population of about 519,337 based on the 2011 Census. Their density in the Andhra-Rayalaseema districts of the southern coast and especially in Kurnool, Chittoor, Kadapa, and Anantapur, poses development singleton problems that demand contextualized development policies.

In this underprivileged group, Yerukala women have the combined vulnerabilities of tribal identity and gender subordination. The social arrangement is patriarchal, which is patrilineal descent, patrilocal residence, and patriarchal authority that greatly limits women from taking charge of their own agency in making decisions regarding household, resource distribution, and livelihood choices (Xaxa,



सत्यमेव जयते



2004). Their traditional jobs, like basket-making, fortune-telling, mat-weaving, and pig-rearing, have been severely affected by the changes in the market as well as urbanization and loss of livelihoods that are forest-dependent, and thus, urgent interventions are required to transform the livelihoods.

In this chapter, the author reviews the policy environment that regulates the empowerment of tribal women in the state of Andhra Pradesh, and the Yerukala community, in particular. It examines institutional processes, programmatic intervention, and developmental results related to different programmes of the central and state governments. Through the critical review of the efficacy of these efforts, the study will contribute to the discussion on inclusive development and offer well-grounded recommendations on how the effectiveness of the empowerment efforts in the target population of the most vulnerable tribal women may be improved.

Review of Literature

The academic discourse of tribal development in India has progressed a lot over the previous assimilationist and isolationist paradigm to more complex conceptualizations of tribal rights, tribal identity, and tribal empowerment. The classic work on tribal communities created by Verrier Elwin has been the template of ethnographic research, and since then, the political economy of tribal marginalization and the efficacy of developmental intervention have been actively considered by other scholars (Xaxa, 1999).

Studies on Denotified Tribes have specifically pointed out the longer-term effects of colonial criminalization on the modern socio-economic situation. Radhakrishna (2001) reported the way in which the Criminal Tribes Act of 1871 replaced mobility, traditional livelihoods, and surveillance, institutionalized surveillance and poverty, and stigmatization between generations. A study of 1,262 nomadic, semi-nomadic, and densely populated communities found across India, chaired by Bhiku Ramji Idate, proposed to the National Commission on Denotified, Nomadic and Semi-Nomadic Tribes, recommended that they be included in the

constitutional reservation schemes (Ministry of Social Justice and Empowerment, 2017).

Empowerment research studies of tribal women have always revealed the hope of collective action bringing about transformation through Self-Help Groups (SHGs). About the participatory model of poverty alleviation, Deshmukh-Ranadive (2004) has studied the model in Andhra Pradesh and concluded that SHGs are much more effective in improving the economic independence of women, their capacity to make decisions, as well as their social status. The innovative Velugu program of the state, which was later expanded as the Andhra Pradesh District Poverty Initiatives Project (APDPIP), showed that social mobilization strategies could indeed access marginalized tribal society when properly formulated.

Barik (2012) discussed the Sustainable Tribal Empowerment Project (STEP) and Indira Kranthi Patham (IKP) activities in the Indian tribal development program in Paderu (Visakhapatnam district) and found mixed results in the empowerment of tribal women. Although the activities of income generation had positive effects, the structural impediments, such as inadequate education, poor infrastructure, and little awareness of the available schemes, limited the effectiveness of the programs. On the same note, Swamy et al. (2016) established that SHG among Chenchu tribal women in Andhra Pradesh also increased household incomes, with difficulty in long-term sustainability.

The crossing of gender and tribal identity has gained more and more academic interest. Nathan (2004) suggested that the tribal women are usually marginalized twice due to their disadvantaged status in the tribal society characterized by patriarchy and their non-participation in the general developmental activities. This view has influenced other more recent policy frameworks, which focus on gender responsive approaches to tribal development, such as the focus on women SHGs in the National Rural Livelihood Mission and the schemes specifically targeting Scheduled Tribe women that are run by the National Scheduled Tribes Finance and Development Corporation (NSTFDC).



Conceptual Framework

This paper utilizes a multi-dimensional conceptualization of the concept of women's empowerment that considers the economic, social, political, and psychological aspects. Based on the conceptualization of empowerment elaborated by Kabeer (1999) as an extension of the capacity of people to make strategic choices in their lives, the analysis will be based on the assessment of policy interventions that improve or limit the agency of Yerukala women in different spheres.

Another analytical tool that can be used to analyze the livelihood strategies of the Yerukala women in relation to the asset base, vulnerability context, and institutional environment is the Sustainable Livelihoods Framework (DFID, 1999). In this framework, there are five types of livelihood assets, which are human capital (education, skills, health), social capital (networks, relationships, trust), natural capital (land, water, forests), physical capital (infrastructure, tools, equipment), and financial capital (savings, credit, income). The policy interventions are evaluated on how effective they are in enhancing these types of assets whilst mitigating structural vulnerabilities.

The intersectionality approach, according to Crenshaw (1989), teaches us about how Yerukala women experience determines their lives as a result of the overlapping of oppression systems: caste/tribe, gender, and classes, as well as the historical effects of criminalization. This theoretical orientation appreciates the fact that empowerment interventions should focus on the interrelatedness of these disadvantages instead of viewing them as independent categories.

Historical background of the Yerukala Tribe

The pre-colonial and colonial era dates back to the early 1800s, when America was founded by Europeans as a colony to benefit from the increased raw material sources available then.

Ethnographic history Ethnographic records of their existence date back to the Telugu-speaking areas of South India, and the Yerukala tribe has ancient roots that are

recorded in Andhra Pradesh, Tamil Nadu, and Karnataka. The traditional occupations of the community were recorded in Thurston and Rangachari (1909), which are basket-making using split bamboo (Dabba Yerukala), mat-weaving using wild date leaves (Yeethapullala Yerukala), production of weaver combs (Kunchapuri Yerukala), and fortune-telling (Parikamuggula Yerukala). Such occupational subdivisions that were endogamous groups with time are meant to show the adaptive livelihood strategies and specialized knowledge of crafts in the community.

The Yerukala community was radically changed socially and economically as a result of the colonial encounter. The British government was paranoid about nomadic people and wanted to create fixed and manageable subjects, so the Yerukala became a Criminal Tribe according to the Criminal Tribes Act of 1871. As examined by Radhakrishna (2001), this legislation was based on colonial premises of hereditary criminality, which equated mobility with vagrancy and the traditional professions with criminal tendencies. The Act required all the members of the communities to be registered and also limited the movement of the community members, as well as placing the members of the colony under the perpetual attention of the colonial officials.

Formation of reformatory settlements marked the effort of the colonial state to reform the allegedly criminal tribes by forcing them to remain sedentary and work in the fields. A leading example of these institutions was the Stuartpuram settlement, which was founded in 1914 under the management of the Salvation Army, in Andhra Pradesh. The families of Yerukala had to leave their traditional jobs and pursue rice farming, which essentially changed their mode of livelihood and culture. The colony categorized work into agricultural, industrial, and penal divisions that put in place a system of disciplinary control with enduring psychological and social effects on society.

Post-Independence Period

The acquisition of independence in 1947 by India contributed to the hopes of liberation by the criminalized tribes. The Criminal Tribes

Act was formally scrapped on 31 August 1952, a date that is now marked as Vimukti Diwas (Liberation Day). In 1956, the Yerukala people were declared a Scheduled Tribe in the new state of Andhra Pradesh, which technically gave them constitutional rights and the benefits of affirmative action.

The process of criminalization to scheduled tribe status was, however, made tricky by the enactment of the Habitual Offenders Act of 1952, which in effect re-stigmatized many of the de-notified communities by targeting individuals based on criminal tendencies. In 2007, the UN Committee on the Elimination of Racial Discrimination (CERD) expressed concern that de-notified and nomadic tribes still experienced stigmatization within the scope of this legislation and urged India to repeal the Act and, in fact, restore the communities.

The new administration's challenges to tribal welfare were introduced after the post-

bifurcation of Andhra Pradesh in 2014. This led to the distribution of the Yerukala people between the states of Andhra Pradesh and Telangana and the coordination of the welfare programs to the new administrative areas. Integrated Tribal Development Agencies (ITDAs), which were the organizing bodies of tribal welfare schemes, were also reorganized, and this had an impact on the introduction of schemes that targeted Yerukala communities.

Yerukala Women Socio-Economic Profile

To comprehend the current state of affairs among the Yerukala women, one has to look into their population and demographic traits, their level of education, economic endeavors, and their position in society and family. Census information, government reports, and empirical studies give an insight into the multidimensional nature of their marginalization.

Table 1: Demographic Profile of the Yerukala Tribe in Andhra Pradesh

| Indicator | Value |
|----------------------------------|---|
| Total Population (2011 Census) | 519,337 |
| Population in Andhra Pradesh | 375,209 |
| Overall Literacy Rate | 48.12% |
| Female Literacy Rate (Estimated) | 35-40% |
| Primary Concentration Districts | Kurnool, Chittoor, Kadapa, Anantapur |
| Language | Yerukala/Kurru basha (shifting to Telugu) |
| Social Organization | Patrilineal, Patrilocal, Patriarchal |

Source: Census of India, 2011; Registrar General of India; ITDA Reports

The disaggregation of genders indicates that there is a high level of inequality in society. The literacy levels of Yerukala women are estimated to be between 10 and 15 percent lower than those of men, which is a general trend in gender discrimination in access to education.

This change in lifestyle of nomadic people to settled people has had unequal effects on women, who often have to shoulder the responsibility of sustaining household subsistence as traditional occupations of the male gender are being transformed.



Table 2: Traditional and Contemporary Livelihood Activities of Yerukala Women

| Traditional Occupation | Contemporary Status | Emerging Alternatives |
|----------------------------------|-------------------------------|------------------------|
| Fortune-telling (Eruka chepputa) | Declining due to urbanization | Small retail trade |
| Basket-making (Dabba work) | Limited market, low returns | SHG-based enterprises |
| Mat-weaving | Competition from plastic | Agricultural labor |
| Pig and poultry rearing | Continuing with modifications | Dairy and goat rearing |
| Collection of forest produce | Restricted due to forest laws | MGNREGA wage work |
| Rope-making | Very limited practice | Construction labor |

Source: Compiled from ITDA Surveys; Tribal Welfare Department Reports; Ethnographic Studies (Thurston & Rangachari, 1909; ITDA Reports, 2022)

Policy Framework for Tribal Women Empowerment

1. Constitutional and Legislative Framework

The Indian Constitution has extensive protection and affirmative action provisions on Scheduled Tribes. Article 15(4) provides the possibility of making special provisions about the development of socially and educationally backward classes, whereas Article 46 provides that the State should foster the education and economic interests of the weaker sections, especially the Scheduled Castes and Scheduled Tribes. The Administrative structure in Scheduled Areas is put in place in the Fifth Schedule, and tribal development in the form of grants-in-aid is given under Article 275(1) of the Consolidated Fund of India.

The Forest Rights Act of 2006 is one of the key legislative interventions that acknowledge the forest rights of tribal forest dwellers, the

Scheduled Tribes. The relevance of this Act to the Yerukala communities is especially clear since their traditional means of livelihood relied on forest resources. The legislation covers an important dimension of tribal livelihood security by vesting the forest rights and offering a platform, which was used in recognizing occupation in forest land; however, the challenge of implementation continues.

2. Central Government Schemes

The Ministry of Tribal Affairs and the Ministry of Social Justice and Empowerment have various schemes that deal with tribal populations, including particular programs regarding the De-notified Tribes. The Tribal Sub-Plan (TSP), which was renamed as the Scheduled Tribe Component, requires states to use their proportions of the ST population when developing them. Special Central Assistance to TSP offers extra grants to economic development in the form of Integrated Tribal Development Projects and in ITDAs, among others.

Table 3: Major Central Government Schemes for Tribal Women Empowerment

| Scheme Name | Implementing Agency | Key Components |
|---|---|--|
| SEED Scheme (2022) | Ministry of Social Justice & Empowerment / DWBDNC | Education, Health Insurance, Livelihoods, Housing for DNTs |
| National Rural Livelihood Mission (NRLM) | Ministry of Rural Development | SHG formation, Bank linkage, Livelihood support |
| Adivasi Mahila Sashaktikaran Yojana | NSTFDC, Ministry of Tribal Affairs | Concessional loans for ST women's enterprises |
| PM Van Dhan Vikas Yojana | TRIFED, Ministry of Tribal Affairs | MFP value addition, Tribal enterprise development |
| Article 275(1) Grants | Ministry of Tribal Affairs | Infrastructure, Education, and Health in tribal areas |
| Dr. Ambedkar Pre-Matric & Post-Matric Scholarship | Ministry of Social Justice | Educational scholarships for DNT students |

Source: Ministry of Tribal Affairs (2023); Ministry of Social Justice and Empowerment (2022); PIB Press Releases

The Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED), which was initiated in February 2022, is a specific intervention of Denotified, Nomadic, and Semi-Nomadic Tribes. The scheme is planned to address four priority areas, which are educational empowerment by providing competitive examination coaching, health insurance cover by Ayushman Bharat PM-JAY, livelihood support by NRLM clusters, and housing support by PMAY, with a budget allocation of Rs. 200 crores in five years (2021-22 to 2025-26). The scheme focuses on the families that have a low annual income of less than 2.50 lakh and are not receiving such schemes.

6.3 State Governmental Initiatives in Andhra Pradesh

The Government of Andhra Pradesh has been carrying out several tribal welfare schemes in the form of the Tribal Welfare Department and Integrated Tribal Development Agencies (ITDAs). The state model has seen developmental changes as compared to the previously existing program of the Velugu, to the more current developmental programs under the Andhra Pradesh state rural livelihood mission (SERP) that particularly target the tribal groups, such as the Yerukala tribe.

Table 4: Andhra Pradesh State Schemes for Tribal Women Development

| Scheme/Program | Year Initiated | Key Features |
|--------------------------|----------------|---|
| Velugu / APDPIP | 2000-2005 | Social mobilization, SHG formation in the poorest mandals |
| APRPRP / IKP | 2003-2010 | Scaled SHG program, Bank linkage, Community investment |
| YSR Cheyutha | 2020 | Rs. 75,000 over 4 years for women aged 45-60 |
| YSR Aasara | 2019 | Interest-free loans to SHG women |
| Rythu Bharosa | 2019 | Rs. 13,500 annual support for tribal farmers |
| ITDA Livelihood Programs | Ongoing | Agriculture, Horticulture, Fisheries, Skills training |

Source: Tribal Welfare Department, Government of Andhra Pradesh (2023); ITDA Annual Reports

Livelihood Transformation Initiatives for Yerukala Women

1. Self-Help Groups as Platforms for Empowerment

The most common institutional agency that has proved useful in the tribal community in Andhra Pradesh to access tribal women is the Self-Help Groups. The state had led in the SHG-bank linkage model, which was later extended nationally by the National Rural Livelihood Mission. A study shows that Andhra Pradesh mobilized more than 48 lakh poor women into 3.7 lakh SHGs and developed a corpus fund of 750 crores, which comprised savings, bank borrowings, and government revolving funds (World Bank, 2004).

To the Yerukala women, SHG-based activities have several advantages, such as habitual savings, access to credit at affordable interest rates, pool bargaining, and skill development and awareness creation platforms.

The federated nature of the Village Organizations (VOs) and Mandal Samakhya is associated with progressive institutional capability, which allows women to interact with the markets, government schemes, and financial institutions in a better way, as compared to individual means.

The research on SHG effects in similar populations indicates that it results in much more economic autonomy and decision-making power among females. Kondal (2014) reported positive effects of SHG membership on empowerment of women in Medak district, and Deshmukh-Ranadive (2004) reported that using the participatory approach helped poor women in Andhra Pradesh to escape debt traps and dependence on money lenders. A systematic review by 3ie (International Initiative for Impact Evaluation) affirmed that economic SHG programs are a good strategy towards realising positive impacts on economic, political, and reproductive empowerment of women.



2. Income Generation Activities

Programs of livelihood diversification among the Yerukala women include both farm and non-farm programs. Some of the agricultural interventions entail assistance in smallholder farming, like the Rural Crops Development Scheme, the supply of seeds and farm inputs, and education in better agricultural methods. Convergence model, which is an amalgamation of 40% ITDA funding, and 50%-line department, and 10% beneficiary contribution, allows larger investments as compared to single-source programs.

The non-farm activities encouraged with ITDAs and NRLM are livestock rearing (dairy, goats, poultry), small enterprises, and value addition of traditional crafts. The PM Van Dhan Vikas Yojana, on its part, focuses on the Minor Forest Produce (MFP) value chains and trains communities on the use of forest resources by training and creating infrastructure that tribes can use to process and market their products. These initiatives are operated through Van Dhan Vikas Kendras, which is a cluster of tribal SHGs.

Table 5: Income Generation Activities Supported for Tribal Women in Andhra Pradesh

| Activity Type | Implementing Agency | Unit Cost (Rs.) | Target Beneficiaries |
|------------------------------|------------------------|-----------------|-----------------------|
| Dairy Unit (2 milch animals) | ITDA/Animal Husbandry | 80,000-1,00,000 | ST women BPL families |
| Sheep Rearing (10+1) | ITDA/Animal Husbandry | 50,000-70,000 | ST women, Landless |
| Goat Rearing Unit | ITDA/NRLM | 30,000-50,000 | SHG members |
| Backyard Poultry | ITDA/Animal Husbandry | 5,000-10,000 | All ST women |
| Kirana/Petty Shop | NRLM/SHG Federation | 25,000-50,000 | Active SHG members |
| Tailoring Unit | ITDA/Skill Development | 15,000-25,000 | Trained ST women |

Source: ITDA Scheme Guidelines; NRLM Operational Guidelines; Tribal Welfare Department (2023)

3. Skill Development and Capacity Building

Empowerment strategies involve the development of human capital. Andhra Pradesh State Skill Development Corporation (APSSDC) and TRICOR (Tribal Cooperative Corporation) are involved in different training needs to reach the tribal youth and tribal women. These consist of trades training like tailoring, computer training, beautician training, food processing training, and development in entrepreneurship.

Capacity building is not limited to technical skills, but it also encompasses financial literacy, leadership, and sensitivity regarding government schemes and entitlements. In places where the institutions are few, Community Resource Persons (CRPs) and Bank Mitras would be the frontline knowledge transfer people. The federated SHG system offers progressive leadership with women being able to rise through

group members to VO representatives to Mandal Samakhya office bearers.

Policy Implementation and Impact Analysis

1. Coverage and Reach

Through scheme implementation analysis, it can be seen that there are major gaps between the policy intentions and ground-level coverage. Even with its extensive design, the SEED scheme, on its introduction, got only 402 online applications a year later, based on the Ministry data, when it is estimated that the population of over 10 crore individuals, who belong to 1,400 DNT/NT/SNT communities, is spread all over the country. This extreme gap identifies major problems in the awareness creation, documentation needs, and access to digital devices that are disproportionately impacting the most marginalized cohorts.

SHG coverage in Yerukala is incomplete, although it is more significant because of the experience terms and institutional structures in Andhra Pradesh. Research hypothesizes that the most marginalized and the poorest households tend to be out of SHG networks because of the

failure to save regularly, social marginalization in communities, or geographic remoteness. The issue of last-mile coverage is especially critical in the context of such communities as the Yerukala, which might be further complicated by social stigmatization.

Table 6: Self-Help Group Development Indicators in Andhra Pradesh

| Indicator | Status (Approximate) |
|------------------------------|----------------------------------|
| Total SHGs in Andhra Pradesh | 9.8 lakh+ groups |
| Total Women Members | 1.01 crore+ members |
| Bank-linked SHGs | 85%+ of total SHGs |
| ST Women in SHGs (State) | Approximately 8-10% of the total |
| Village Organizations (VOs) | 38,000+ VOs |
| Mandal Samakhya (MS) | 650+ MSs |

Source: SERP/APSERP Annual Reports; NRLM MIS Data; NABARD SHG-Bank Linkage Reports (2022-23)

2. Economic Impact Assessment

Empirical studies of the empowerment programs of tribal women in Andhra Pradesh have shown that there are positive, though inconsistent, economic effects of these programs. A study conducted by Swamy et al. (2016) of the Chenchu tribal women determined that participation in SHGs increased household incomes, savings behavior, and access to institutional credit. The 3ie systemic review establishes that SHG membership results in increased capacity of women to impose resource control (economic empowerment), but the impact differs considerably depending on the program design, implementation intensity, and local specifics.

The trade-off between the breadth and depth of programs, as observed in the Bihar JEEViKA evaluation, indicates that a high rate of program scaling can thin out the intensity of programs and water down their effects. This finding implies that it would enable the empowerment of Yerukala women in a localized community-based problem that might need more intense, culturally-relevant interventions than generic program models can offer. The existence of several implementing agencies (ITDA, NRLM, TRICOR, line departments) will pose some coordination issues, which can also influence the program coherence and impact.

3. Social and Political Empowerment

Other than the economic results, empowerment programs have brought about social and political transformation among the participating women. Research records growing confidence in speaking in front of people, greater attendance of Gram Sabha meetings, greater freedom of movement outside the home, and greater control over making family decisions. It has an institutional structure that is federated, which offers progressive leadership opportunities; some tribal women have made it to district and state positions within SHG federations.

Nevertheless, the further change of the gender relations is limited. The studies have shown that even though there can be some rise in the economic role of women, traditional patriarchal forms can still be found, and decision-making and asset ownership remain in the hands of male relatives. Among the Yerukala women, the added burden of social stigmatization that their DNT condition entails presents added obstacles to complete socialization and political inclusion.

Challenges and barriers to Empowerment

Embarking on the issue of women's empowerment, despite the elaborate policy



framework and multiple schemes, the Yerukala women encounter a variety of challenges that limit the empowerment process. These obstacles

can be individual, household, community, institutional, and structural, and tend to contribute to each other complexly.

Table 7: Multi-Level Barriers to Yerukala Women's Empowerment

| Level | Key Barriers | Manifestations |
|---------------|---|---|
| Individual | Low education, Limited skills, Health issues | Difficulty accessing formal schemes, Limited livelihood options |
| Household | Patriarchal control, Domestic burden, Poverty | Limited mobility, Time poverty, Constrained decision-making |
| Community | Social stigma, Discrimination, and isolation | Exclusion from mainstream networks, Limited social capital |
| Institutional | Documentation gaps, Procedural complexity, and limited outreach | Exclusion from schemes, Corruption in delivery |
| Structural | Market marginalization, Land alienation, Policy gaps | Economic vulnerability, Livelihood insecurity |

Source: Synthesized from literature review and policy analysis

This is a challenge to DNT communities regarding documentation requirements. Most of the Yerukala families have no birth certificates, caste certificates, land records, or other documents that would enable them to utilize the government schemes. The historical trend of movement and displacement of settlements and low literacy has led to gaps in documentation that are further worsened by the current digital governance systems, instead of being mitigated. The digital nature of the SEED scheme, which is based on registration through a specific portal, although aimed at providing transparency and efficiency, virtually excludes the communities with low digital penetration and literacy.

The existence of the social stigma surrounding the representatives of the so-called criminal tribe label still impacts the relations of the members of the Yerukala community with the state institutions, especially the police. It is reported that DNT community members are disproportionately suspected and harassed in the course of police investigations, which are the factors that can explain their unwillingness to interact with government agencies. This history of criminalization results in the lack of trust that is a prerequisite for the ineffectiveness of welfare interventions.

Policy Recommendations

In conclusion to the policy frameworks analysis, the experiences of implementation, and the barriers identified, the following recommendations are developed to improve the empowerment of Yerukala tribal women:

To begin with, there must be community-specific planning and implementation strategies. Many generic tribal welfare programs do not deal with historical experiences, cultural practices, and modern-day issues of particular communities, such as the Yerukala. The ITDAs are supposed to come up with community-based sub-plans, which consider ethnographic insights, the identification of the traditional knowledge systems, and the adjustment of interventions to the context of the local livelihood. This can involve rehabilitation and contemporaryization of the traditional crafts like basket-work and mat-weaving with design innovation, market connection, and branding as tribal art.

Second, documentation drives and special registration camps are to be arranged, particularly for Yerukala and other DNT communities. These camps ought to offer services in getting caste certificates, enrolment in Aadhaar, opening of bank accounts, and enrolment in other welfare schemes. The geographic spread and restricted



सत्यमेव जयते



mobility of such communities can be solved through mobile service delivery mechanisms.

Third, the convergence mechanisms should be enhanced to align the various agencies and schemes that are supposed to focus on tribal women. A one-window system at the ITDA or mandal level with nodal officers in the DNT community may be effective in terms of service delivery and lower the transaction cost that makes beneficiaries access multiple programs. Offline-based systems of registration and facilitated support of digitally marginalized groups should be used to complement the digital platforms.

Fourth, social stigmatisation can only be resolved through the use of intensive awareness, sensitisation of the government officials, especially police and revenue departments, and media coverage of DNT communities in a positive manner. Vimukti Diwas (August 31) is a time when people can be educated on the historical injustices against these groups of people and the current contributions they make.

Fifth, institutions headed by women should be reinforced, rather than being credit channels as they are at present. SHG federations may be the venue for organizing a collective voice, community rights advocacy, and interacting with local institutions of governance. Long-term structural change can be achieved by the establishment of the leadership potential of Yerukala women in these structures and their representation in the decision-making institutions that are at a higher level.

Sixth, housing and land rights need to be looked into. The housing aspect of the SEED scheme and the PMAY provisions must be aggressively marketed to the Yerukala communities as a way of rectifying their landlessness and settlement insecurity in the past. Sustainable livelihood development requires the regularization of the current settlements and secure tenure provision.

Conclusion

The case of the empowerment of tribal women of Yerukala in Andhra Pradesh is a thorny development case that cuts across historical injustice, modern marginalization, and

the constraints of the current policy frameworks. Although India has now built an elegant structure of tribal welfare schemes and women empowerment programs, the adoption of such policies into practical changes in the lives of the most vulnerable communities has not been fully implemented.

The experience of the Yerukala community demonstrates that the need to colonize by using criminalization still casts its shadow on the developmental outcomes over thirty-five years after the decantification. The stigma surrounding the DNT status, coupled with economic deprivation, educational disadvantage, and gender discrimination, compounds vulnerability that the generic interventions find hard to overcome. The difference between the potential beneficiary population and actual program coverage, which came out with a blunt force in the data of the SEED scheme, points to the necessity of more intensive and community-related approaches.

Self-Help Groups have proved that they can be used as economic empowerment and social mobilization, and as collective agency. The experience of Andhra Pradesh, which has a unique model of SHG-bank linkage and a federated institutional framework, can provide a lot of learning on how to reach the marginalized tribal women. Nevertheless, to make sure that the most disadvantaged households in already disadvantaged communities are incorporated, it is necessary to have specific targeting approaches and additional support mechanisms.

The livelihood change among the Yerukala women should create a balance between preserving the traditional knowledge and culture and offering them new economic opportunities. The market change and resource scarcity are resulting in the erosion of the traditional occupations, and thus diversification is necessary, but the interventions must appreciate existing skills and social networks and build on them instead of establishing totally alien livelihood models.

Finally, the empowerment of the Yerukala tribal women needs not only better program implementation but also essential alterations in



both the attitude of the society and the structural processes. Complementary to targeted welfare interventions, there is a need to address the legacy of criminalization, provide equal treatment by the state institutions, and establish enabling environments in which the intended population can be able to participate in the economic sphere. It should not only be poverty reduction but the reinstatement of dignity, agency, and complete citizenship of generations of people systematically marginalized by the system.

With India looking forward to being a developed country by 2047, the 100 th anniversary of its independence, there is a moral obligation to ensure that the most vulnerable people in this country stand to enjoy the benefits of this growth. Yerukala women and tribal women in the country should be empowered to be able to realize this constitutional vision of social justice and the commitment of the Sustainable Development Goals to leave no one behind.

Acknowledgements

The author gratefully acknowledges ICSSR's financial support for this paper, produced under the ICSSR Major Project "From Margins to Mainstream: Policy Interventions for Yerukala (PVTG) Tribal Women's Socioeconomic Empowerment in Andhra Pradesh" (File No. 120/2024-25/ICSSR/RP/MJ/GEN). The author also thanks the research team and Sri Krishnadevaraya University, Anantapuramu-515003, Andhra Pradesh.

References

Barik, S. K. (2012). Are tribal women empowered: Understandings from Sustainable Tribal Empowerment Project (STEP) and IKP in ITDA Paderu of Visakhapatnam district, Andhra Pradesh. *Elixir Social Science*, 46, 8323-8327.

Census of India. (2011). *Primary Census Abstract for Scheduled Tribes*. Office of the Registrar General and Census Commissioner, Government of India.

Crenshaw, K. (1989). Demarginalizing the intersection of race and sex: A Black feminist critique of antidiscrimination doctrine, feminist theory and antiracist politics. *University of*

Chicago Legal Forum, 1989(1), 139-167.

Deshmukh-Ranadive, J. (2004). Women's self-help groups in Andhra Pradesh: Participatory poverty alleviation in action. In the *Conference on Scaling Up Poverty Reduction*. World Bank, Shanghai.

DFID. (1999). *Sustainable Livelihoods Guidance Sheets*. Department for International Development, UK.

International Initiative for Impact Evaluation (3ie). (2020). *Effects of Economic Self-Help Group Programs on Women's Empowerment: A Systematic Review*. 3ie Systematic Review.

Kabeer, N. (1999). Resources, agency, achievements: Reflections on the measurement of women's empowerment. *Development and Change*, 30(3), 435-464. <https://doi.org/10.1111/1467-7660.00125>

Kondal, K. (2014). Women's empowerment through self-help groups in Andhra Pradesh, India. *International Research Journal of Social Sciences*, 3(1), 13-16.

Ministry of Social Justice and Empowerment. (2017). *Report of the National Commission for De-notified, Nomadic and Semi-Nomadic Tribes* (Idate Commission). Government of India.

Ministry of Social Justice and Empowerment. (2022). *Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED): Guidelines*. Government of India.

Ministry of Tribal Affairs. (2023). *Annual Report 2022-23*. Government of India.

NABARD. (2023). *Status of Microfinance in India 2022-23*. National Bank for Agriculture and Rural Development.

Nathan, D. (2004). Capabilities and vulnerabilities of tribal women. In V. Bhargava (Ed.), *India and the Millennium Development Goals*. World Bank.

Radhakrishna, M. (2001). *Dishonoured by History: Criminal Tribes and British Colonial Policy*. Orient Longman.

Swamy, G. A., Rao, K. V., & Reddy, V. N. (2016). The impact of the SHG model on Chenchu tribal women in Andhra Pradesh. *South Asian Journal of Participative Development*, 16(2), 55-62.

Thurston, E., & Rangachari, K. (1909). *Castes and Tribes of Southern India* (Vol. 1-7). Government Press.

Tribal Welfare Department. (2023). *Annual Administrative Report*. Government of Andhra Pradesh.

United Nations Committee on the Elimination of Racial Discrimination. (2007). *Concluding Observations: India*. CERD/C/IND/CO/19. United Nations.

World Bank. (2004). *India: Women's Self-Help Groups in Andhra Pradesh – Participatory Poverty Alleviation in Action*. World Bank.

Xaxa, V. (1999). Tribes as indigenous people of India. *Economic and Political Weekly*, 34(51), 3589-3595.

Xaxa, V. (2004). Women and gender in the study of tribes in India. *Indian Journal of Gender Studies*, 11(3), 345-367. <https://doi.org/10.1177/097152150401100303>



सामाजिक न्याय और
अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

श्रेयस

शीर्ष संस्थानों से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा

मेधावी अनुसूचित जाति के छात्रों
के लिए शीर्ष श्रेणी की शिक्षा

- ▶ आईआईएम, आईआईटी और एम्स सहित 266 प्रतिष्ठित संस्थानों में उपलब्ध है
- ▶ महिला छात्रों के लिए 30% स्लॉट आरक्षित

अधिक जानकारी के लिए
<https://socialjustice.gov.in/>
पर जाएं



Education, Language, and Empowerment: Addressing Socio-Economic Challenges of Koya Tribal Women through English

Dr. Venkanna K.

Abstract

This chapter discusses how the English language education can be transformed to help in solving the socio-economic problems faced by the Koya tribal women in India. The Koya tribe, which is mostly found in the forested areas of Telangana, Andhra Pradesh, Odisha, and Chhattisgarh, is one of the major Scheduled Tribe communities in India with a population of about 7.38 lakh in the 2011 Census. Although there is a constitutional protection and government interventions, the situation of the Koya women can be described as marginalized (with low literacy rates of 47 percent female literacy versus 60.7 percent male literacy), a lack of quality education access, as well as access to economic opportunities. This paper follows a mixed-method design, which involves a combination of quantitative data (government surveys) and qualitative data (field observations) in the analysis of the interplay of language, education, and empowerment in this tribal group. The results indicate that mastery of the English language is a crucial tool of socio-economic mobility; it increases employment chances, digital literacy, and involvement in mainstream economic activities. The chapter suggests a multilingual education system that reconciles the instruction in the mother tongue with the strategic learning of the English language to support the sustainable empowerment of the Koya tribal women in accordance with the provisions of the National Education Policy 2020.

Keywords tribe, tribal women empowerment, English language education, socio-economic development, multilingual education, NEP 2020, Scheduled Tribes, linguistic empowerment, gender disparity, India.

Introduction

The nexus between language, education, and empowerment is a critical point of intersection in the developmental patterns in marginalized communities in modern India. The Koya tribe is one of the many tribal communities that live in the Indian subcontinent and makes an interesting case study on how language interventions, especially the English language education, can be considered as the driver towards socio-economic change. Koyas or Koitur are mentioned among the few multilingual and multi-racial tribal groups of India that are mostly located in the Eastern Ghats region of Telangana, Andhra Pradesh, Odisha, and Chhattisgarh (Madhu Sudhanarao, 2017). The 2011 Census reveals that the Koya tribe in India has a total population of 7,38,629, with India states of Telangana (4,86,391), Andhra Pradesh (1,04,348), and Odisha (1,47,137) having the highest concentration of the tribe.

The educational achievement gap of tribal people in India has been marginalized historically, and its impact is disproportionate to women. Although the general literacy level in India has steadily increased to 80.9 percent according to the Periodic Labour Force Survey 2023-24, the literacy level of Scheduled Tribes is only about 59 percent, which is a long way behind the national average (Ministry of Statistics and Programme Implementation, 2024). Of greater concern is the gender gap among the tribal communities, where the percentage of female literacy is always lower by a significant gap. In the case of the Koya tribe, in particular, the female literacy is only 47 percent, as opposed to 60.7 percent among males, which is the cumulative burden of tribal women (IJRSSE, 2017).

It is hard to overestimate the role of studying the English language in this respect. As



सत्यमेव जयते



Meganathan (2011) notes, English has ceased to be a colonial heritage and library language and an empowerment tool and social-economic mobility in post-independent India. The language that used to be viewed as accessible to the urban elites has turned out to be a popular demand language towards upward mobility (Graddol, 2010). The repercussions of this change on tribal women are enormous, as they are the subject of numerous disadvantages, including tribal identity, gender, rural status, and language marginalization. The current chapter attempts to analyze how English language education may be used to correct such overlapping inequities and be a factor towards the comprehensive empowerment of the Koya tribal women.

Theoretical Framework: Language, Education, and Empowerment

1. Conceptualizing Empowerment

The notion of empowerment, which is supported by Sen (1999) in his capability approach, takes into account the increase in the freedoms and abilities that allow individuals to live lives they cherish. Empowerment to tribal women also goes beyond economic progress to also cover increased agency, better social relations, increased involvement in the decision-making process, and being able to question patriarchal systems both within and beyond their communities (Kabeer, 1999). Oxford Dictionary is empowerment, which means giving power or authorizing, whereas the Cambridge International Dictionary focuses on the formal legal right or freedom of a person to do something. To tribal women, this will become access to education, financial resources, medical care, and social acknowledgment, which have long withheld from them.

Education forms a pillar of empowerment as it helps individuals to become critical thinkers, gain marketable skills, and gain access to information that is imperative in making informed decisions. Unlike other educators, the International Journal of Research and Innovation in Social Science (2024) observes that Education is an instrument that helps women identify the proper direction towards their general growth

and development. The ability of the educational system to bridge social disparities and give skills acquisition a proper acknowledgment is especially applicable to tribal societies that have traditionally been ostracized by mainstream educational institutions.

2. Language as a Power of Empowerment.

Language takes a key place in the empowerment discussion as it is not only a knowledge transfer system but a status indicator as well. In India, English has been given a special role where it has become the language of higher education, professional development, and international connectivity. The National Knowledge Commission (2008) acknowledged this fact and gave a recommendation to teach English as a language to ordinary people in schools because it believes that an early intervention in this area would enable us to construct an inclusive society. Nevertheless, the stance should be opposed to the cognitive and cultural advantages of mother-tongue education, which is highlighted by UNESCO and restated in the National Education Policy of India 2020.

The hierarchy of language used in Indian education, as illustrated by Meganathan (2011), gives English and the state language a top position as they are represented in the central part of the hierarchy, and the tribal and minority languages are marginalized to the periphery. The implications of this hierarchy on tribal learners are far-reaching since, in many cases, there is some kind of linguistic alienation when dealing with instruction in foreign languages. Mohanty (2009) has reported the situation in which tribal children experience the phenomenon of the so-called double divide, not being taught in their own language, while not being taught English well enough, leading to poor outcomes in their education and high turnover rates. The current research contextualizes the English language education of Kaya tribal women as a part of this multifaceted language setting in which a policy must be supported to understand the importance of multilingualism and utilize English strategically as a means of socio-economic improvement.



The Koya Tribe: Demographic Profile and Socio-Economic Context

1. Geographic Distribution and Population

The Koyas are an ancient Scheduled Tribe group that is attributed to a distinctive lifestyle and shared cultural history. They have many different names, such as Koi, Koyalu, Koyollu, Koya Doralu, and Doralu Sattam, and may also be subdivided into Koya, Doli Koya, Gutta Koya (Gotti Koya), Kammara Koya, Musara Koya, Oddi Koya, Pattadi Koya (Madhu Sudhanarao, 2017). The Koyas refer to their own group as Koyas in their dialect, and the name is supposedly derived from the word Koitur, meaning tree in the Koyya language.

The Koya homeland, which is also called the land of Koithur, includes the lands along the rivers Indravati, Godavari, Sabari, Sileru rivers, as well as the forested Eastern Ghats covering some parts of the Bastar, Koraput, Warangal, Khammam, Karimnagar, and the East and West Godavari districts. In Andhra Pradesh, Koyas are mostly found in the Alluri Sitharama Raju district, whereas in Odisha, they are mostly found in the Malkangiri district. They live in the far-southern Bastar region of Chhattisgarh, in the Sukma and Bijapur districts. Sex ratio in the Koyas is quite acceptable at 1044 females per 1000 males in Andhra Pradesh and Telangana and 1072 females per 1000 males in Odisha, reflecting a demographic trend unlike that of the overall Indians within the country (Census of India, 2011).

Table 1: State-wise Distribution of Koya Tribal Population in India (Census 2011)

| State | Total Population | Males | Females | Sex Ratio |
|----------------------|------------------|-----------------|-----------------|-------------|
| Telangana | 4,86,391 | 2,37,847 | 2,48,544 | 1045 |
| Odisha | 1,47,137 | 71,014 | 76,123 | 1072 |
| Andhra Pradesh | 1,04,348 | 51,178 | 53,170 | 1039 |
| Chhattisgarh (Dorla) | 46,978 | 23,489 | 23,489 | 1000 |
| Total (India) | 7,38,629 | 3,60,441 | 3,78,188 | 1049 |

Source: Census of India, 2011; Madhu Sudhanarao (2017), IJIRSET

2. Socio-Economic Characteristics

The Koyas are mainly settled farmers and craftsmen who have the knowledge of producing bamboo furniture such as mats that are used to fence, dustbins, and baskets. Their farming systems entail the growing of jowar (sorghum), ragi, bajra, and other millets, where rice and tobacco are the main cash crops in the wetlands and banks of rivers. The conventional practice of agriculture among Koyas is podu slash and burn, where they clear the jungle on the slopes of the hills, burn the trees, and plant in the ashes. But the pressure of a growing population, cutting of trees, and the government's restrictions on podu cultivation have urged most Koyas to adopt settled agriculture on fixed plots with small landholdings of 2.0 acres of wet and 4.1 acres

of dry land per family (Peoples of the World, 2023).

Displacement caused by development projects has added to the economic marginalization of the Koya people, with the largest displacing 1,70,275 Koyas in over 276 villages in the Khammam district (Wikipedia, 2024). This has caused people to lose their traditional livelihoods based on land and forest resources due to the movement and migration of Gotti Koyas, who have to rely on wage labor in the farmlands. The limited availability of such jobs has also been a cause of malnutrition among children as well as high levels of anemia among women, which shows how the economic vulnerability is interrelated with the health outcomes.

Educational Status of Koya Tribal Women: Challenges and Disparities

1. Literacy Rates and Gender Disparities

Educational situation of the women of the tribe of Koya indicates that there are notable disparities which reflect the general tendencies of marginalization in the Indian society. The literacy level of Koyas is 53.7 percent according to the 2011 Census and further analysis, and the

gender gap is also high: 60.7 percent among the male population, and 47 percent among the female population in Andhra Pradesh and Telangana. The gap in Odisha is even more advanced; the total Koya literacy is 29.87, and it consists of 36.46 in males and only 23.77 in females (IJIRSET, 2017). These numbers are sharply differentiated from the national literacy rate of 80.9% (PLFS 2023-24) and even the general literacy rate of the Scheduled Tribe of 59% (Census 2011).

Table 2: Comparative Literacy Rates: Koya Tribe vs. National and ST Averages

| Category | Overall (%) | Male (%) | Female (%) |
|---------------------------------|-------------|----------|------------|
| National Average (PLFS 2023-24) | 80.9 | 88.0 | 81.0 |
| Scheduled Tribes (Census 2011) | 59.0 | 68.5 | 49.4 |
| Koya Tribe (AP & Telangana) | 53.7 | 60.7 | 47.0 |
| Koya Tribe (Odisha) | 29.87 | 36.46 | 23.77 |

Source: Census of India (2011); PLFS (2023-24); IJIRSET (2017)

2. Barriers to Education for Koya Tribal Women

The existence of educational marginalization of the women belonging to the tribe of Koya can be explained by the complex structural, economic, cultural, and linguistic factors. According to the Standing Committee on Social Justice and Empowerment (2018), poor economic conditions of Scheduled Tribes, high distance between home and school (particularly, with secondary education and higher), and ignorance about the benefits of formal education in the long run can be listed among the primary obstacles. In the case of Koya women in particular, the general barriers are enhanced by the gender-specific barriers such as the early marriage tradition, family obligations, safety issues during commuting to school far, and the lack of female teachers in the rural schools.

Language is a very strong challenge to Koya children and women. The Koyas use the Koyi language (or Koyaspa), which is a Dravidian language and closely related to Gondi. Most Koyas also use either Gondi or Telugu in addition to Koyi, but which language is used in the schools is usually Telugu or Odia (depending on the state), which causes a language disconnection, creating a barrier to understanding and education. In an instance cited by Mohanty (2009), tribal children are even worse off than the rest of the rural learners because their languages do not exist and are hardly spoken in school. The result of this linguistic alienation is high dropout rates and a deterrent to enrollment, especially among girls who might have reduced exposure to the dominant language of the region because of their isolation in the domestic spaces.

Table 3: Key Barriers to Education for Koya Tribal Women

| Category | Specific Barriers |
|-------------------|--|
| Economic | Poverty; child labour; opportunity cost of education; inability to afford educational materials; need for supplementary family income |
| Geographic | Remote village locations, lack of schools in tribal areas, difficult terrain, long distances to secondary schools, and inadequate transportation |



| Category | Specific Barriers |
|------------------------|--|
| Linguistic | Medium of instruction in an unfamiliar language; absence of mother tongue education; lack of bilingual teachers; inadequate textbooks in the Koya language |
| Cultural/Social | Early marriage, domestic responsibilities, gender role expectations, limited parental awareness of educational value, and a preference for sons' education |
| Institutional | Teacher absenteeism, lack of female teachers, inadequate infrastructure, absence of separate toilets for girls, and poor quality of teaching |

Source: Compiled from PRS India (2018); India Education Diary (2020); Springer (2024)

English Language Education as a Tool for Empowerment

1. The Changing Role of English in India

The history of the English in Indian education is a wonderful, slow revolution of colonial oppression into need. According to the records by Meganathan (2011), English is no longer a library language and a language of higher education, but one of popular demand to climb up the ladder. The language that was previously introduced in the third or sixth grade is now introduced in grade one in all the states as the usual second language in the country. According to research by NCERT, there has been a doubling of the number of schools educating English as a first language in primary schools to ten percent in 2002, as compared to 1993; this indicates that the English medium of education is growing in demand.

This change has far-reaching implication to the tribal communities. As Anderson (2012) notes, English is still unaffordable to the disadvantaged due to their economic condition, caste, or both. Government-controlled rural schools, in addition to schools in tribal pockets, do not teach in the mother tongue of the students and do not expose them well to English (Mohanty, 2009; Meganathan, 2011). This is a two-fold disadvantage to tribal students, especially women, who are, therefore, at a very disadvantageous position in gaining higher education and jobs where English proficiency is being given a key role. To the Koya tribal women, English language skills are not only a sign of linguistic proficiency but also economic empowerment, digital literacy, and involvement in the greater national and global discourse.

2. English and Socio-Economic Mobility

The relationship between the English language proficiency and socio-economic progress is already known in the Indian scenario. English is a gateway to tertiary education, with the majority of competitive examinations, professional training, and more prestigious institutions teaching and assessing in English. The digital economy, which has now become a major source of employment, is mostly in English, and thus, being able to converse in the language is crucial to be involved in the IT sector, business process outsourcing, e-commerce, and the associated industry. In the case of tribal women who have traditionally been restricted to agricultural practices, forestry, and manual labor, English language proficiency can lead to a career in the formal sector, governmental work, and entrepreneurship.

The study conducted by Naveen et al. (2023) on tribal women empowerment in Odisha revealed that literacy and training were some of the most influential variables in empowering women in society and their families. The research found that there are four explanatory variables that were used to make women entrepreneurs in the tribal society, including literacy, membership with NGOs, training, and personal business revenue, which supported the empowerment of women. Engaging in literacy and training can also be more effective in this situation through the English language proficiency, which allows access to more resources, networks, and opportunities. The language is not only an instrument of communication but also cultural capital, which improves social status and allows one to integrate with the mainstream economic systems.

Table 4: Potential Benefits of English Proficiency for Koya Tribal Women

| Domain | Potential Benefits |
|--------------------|---|
| Economic | Access to formal sector employment; participation in IT/BPO industries; entrepreneurship opportunities; higher wages; reduced wage discrimination |
| Educational | Access to higher education, competitive examination success, scholarship opportunities, and exposure to global knowledge resources |
| Digital | Internet and social media access; digital financial services; e-governance participation; online learning opportunities |
| Social | Enhanced social status; improved negotiation skills; greater confidence; expanded social networks; cultural capital |
| Political | Awareness of rights; engagement with government schemes; participation in governance; leadership opportunities |

Source: Compiled from Meganathan (2011); Naveen et al. (2023); Graddol (2010)

Policy Framework: NEP 2020 and Tribal Education

1. Multilingual Education Under NEP 2020

The National Education Policy 2020 is a paradigm shift in the attitude of India towards language education, which supports the concept of multilingualism and the role of mother tongue education in the formula of three languages, in addition to keeping English as a significant element. The policy suggests that the medium of instruction up to a minimum age of Grade 5, and hopefully up to Grade 8, must be the mother tongue, or home language, local language, or regional language of the child. This suggestion is informed by the cognitive research studies that have proven that children learn better when they are taught using languages they are familiar with (UNESCO, 2003). In the case of tribal groups, such as the Koyas, this provision gives a chance to formal education in the Koyas language at primary levels.

The NEP 2020 specifically reflects on the issue of tribal education in a number of lines. It proposes the introduction of Early Childhood Care and Education (ECCE) in Ashramshalas in tribal dominated regions and the importance of factoring the Indian Knowledge Systems, such as tribal knowledge, indigenous, and

traditional learning styles, into the curriculum. The policy also suggests certain courses in tribal ethno-medicinal practice, forest management, traditional crop farming, and natural farming. Notably, the policy fosters the creation of high-quality textbooks in science and mathematics, to allow students to think and speak about the two subjects not only in their native language/mother tongue but also in English (Ministry of Education, 2020).

2. Eklavya Model Residential Schools (EMRS)

The Eklavya Model Residential Schools program is the beacon of educational intervention of the Ministry of Tribal Affairs. EMRS was founded in 1997-98 in an attempt to offer Scheduled Tribe students in remote regions quality middle and high-level education to enable them to access reservation benefits in higher education and employment. In the modified scheme as stated in 2018-19, the government made a goal to have 728 EMRS in the whole nation by 2026, and one school in each block is to have over 50% ST and at least 20,000 tribal individuals (Ministry of Tribal Affairs, 2024). By 2024, 708 EMRS will be approved, and 405 schools will be operational, employing more than 8,000 teaching and non-teaching personnel.



Table 5: Eklavya Model Residential Schools (EMRS) - Key Statistics

| Parameter | Status (2024) |
|-------------------------------------|-----------------------------------|
| Target EMRS by 2026 | 728 |
| Total Sanctioned EMRS | 708 |
| Functional EMRS | 405 |
| Capacity per School | 480 students (equal boys & girls) |
| Estimated Beneficiaries | ~3.5 lakh ST students |
| Staff Recruited | >8,000 |
| Construction Grant (Plain Area) | Rs. 37.80 crore |
| Construction Grant (NE/Hilly/LWE) | Rs. 48 crore |
| Recurring Grant (per student/annum) | Rs. 1.09 lakh |

Source: Ministry of Tribal Affairs, PIB (2024); NESTS (2024)

Proposed Framework: Integrating English Education with Mother Tongue Instruction

1. A Balanced Multilingual Approach

This chapter has suggested a balanced multilingual education system that can balance mother tongue education and strategic acquisition of the English language based on findings of the challenges encountered by Koya tribal women and the policy framework available. This solution acknowledges that it is not a binary decision between mother tongue versus English, but instead, a scaffolded solution, where both languages are introduced with strategic use, can help the children to not lose touch with their culture and also to acquire the language skills necessary to achieve socio-economic progress (Observer Research Foundation, 2025). The framework is anchored on four pillars, namely: initial mother tongue literacy, gradual move to multilingual instruction, specific development of English skills, and integration of vocation.

The former pillar focuses on basic literacy in the Koya language in early childhood and primary school (Grades 1-3). This is in line with the recommendation by NEP 2020 and the cognitive science studies that indicate that children acquire concepts better in familiar languages. This approach is based on the Ministry of Tribal Affairs initiative to prepare the tribal languages as bilingual primers via Tribal

Research Institutes (TRIs). The second pillar entails a progressive move towards trilingual teaching (Koya-Telugu/Odiya- English) in the upper primary grades (4-8), and the regional language will act as a transition between mother tongue and English. This gradual process will enable students to develop on the already existing linguistic abilities as they learn new ones.

2. English Education Implementation Strategies

The barriers experienced by the tribe women of the Kayoa community are unique and will require special attention to implement effective English education in the area. Teacher training is, first of all, necessary. Kaya teachers who are not only familiar with the culture and language of the people but also with English should be hired and trained. A replicable model is the UNICEF program in Chhattisgarh that created a handbook for the teachers and taught them how to educate children in more than one language. Second, context-related learning resources are required, with the inclusion of local examples, narratives, and situations that are relevant to the experience of Koya women and the introduction of English words and their structures. Third, classroom learning can be enhanced by technology-based learning based on DTH education, online learning, and digital learning materials, especially in remote regions where high-quality English instructors are absent.

Fourth, the framework puts an emphasis on the functional English skills with employment-oriented outcomes. Instead of focusing on literary English as their core, the curriculum must be based on communicative competence, digital literacy, and vocational vocabulary that would be applicable to existing employment options. The 400 Skill Labs currently being established in 400 EMRS in cooperation with the Ministry of Skill Development and Entrepreneurship

provide a possibility of combining the English language training with the vocational skills development. Fifth, it is essential to engage the community. This is done by sensitizing the parents and leaders within the community on the instrumental importance of the English language without convincing them that English schooling is something that will displace the Koya cultural identity and language.

Table 6: Proposed Implementation Framework for English Education Among Koya Tribal Women

| Phase | Grade Level | Language Focus | Key Activities |
|-------|------------------------|---|--|
| 1 | Pre-primary to Grade 3 | Koya (primary); Regional language (oral introduction) | Mother tongue literacy; oral exposure to the regional language through stories and songs |
| 2 | Grade 4-5 | Koya + Regional language; English (oral introduction) | Bilingual content; basic English vocabulary through games and activities |
| 3 | Grade 6-8 | Trilingual (Koya-Regional-English) | English reading and writing; subject content in the regional language with English terminology |
| 4 | Grade 9-12 | English (functional focus); Regional language | Communicative English; digital literacy; vocational English; competitive exam preparation |
| 5 | Post-secondary | English (professional); Continuing MT use | Skill-based training; entrepreneurship support; higher education coaching |

Source: Developed by the author based on NEP 2020; UNICEF (2024); ORF (2025)

Challenges and Recommendations

1. Implementation Challenges

There are a number of challenges involved in the implementation of the proposed framework. To begin with, there is the issue of the lack of qualified teachers who could introduce multilingual pedagogy. The schools that are operated by the government in the rural regions and the tribal schools may suffer a poor teacher-student ratio (average reading 42:1 in all India), have absenteeism of teachers, and they may not be conversant with both tribal languages and English. Second, the quality learning materials in the Kaya language would need long-term investment and professionalism. Although the Ministry of Tribal Affairs has been trying to develop bilingual primers in TRIs, this has been taking a long time, and the material is not always pedagogically sophisticated.

Third, infrastructural shortages continue to exist in the tribal regions. The National Institute of Rural Development study findings showed that 59 percent of all primary schools run by the government had no drinking water, and 89 percent had no toilets, which is disproportionately deterring and discouraging girls from attending school. Fourth, the socio-cultural obstacles, such as early marriages, family duties, and parental perceptions about girls attending school, still hinder the educational attendance of women in Koya. Last but not least, the economic susceptibility of the households in the Koyas implies that education is prone to conflict with the immediate food and livelihood requirements, in that the families would rather subject the children to some remunerative jobs that augment family income than invest in a future educational perspective.



2. Policy Recommendations

According to the discussion in this chapter, a number of recommendations can be made as policy. To start with, a special recruitment program and training of the Koya-speaking teachers who are skilled in English is required. Tribal youth should be given incentives to train as teachers and employment assured in their home areas. Such teachers could be trained in the Eklavya Model Residential Schools. Second, the process of creating Koya language materials needs to be sped up by involving TRIs, academic institutions, and community elders. The Ministry of Tribal Affairs has been making AI-based translation software to convert English/Hindi text into tribal languages, and it should be hastened to allow it to be used in education.

Third, the learning of the English language among the women in the Kaya community should be associated with livelihood opportunities by providing the community with skill development programs. Immediate economic payoffs of language learning can be demonstrated by integrating English training with vocational training in such up-and-coming sectors as hospitality, healthcare, retail, and IT-enabled services. Fourth, specific interventions for adult Koya women who were not educated are to be designed, such as the use of functional literacy, vocational education with integrated English lessons, and assistance to women's self-help groups and micro-enterprises. Fifth, parents and community leaders should be sensitized through community engagement campaigns on the complementary benefits of multilingual education, fears of eroded culture, and socio-economic benefits should be brought into focus.

Conclusion

Education and language empowerment of Koya tribal women is not a simple issue that can be handled by only a simple intervention that considers cultural identity, but allows socio-economic progress. This chapter has provided the demographic profile and socio-economic condition of the Koya tribe, considered the educational inequality existing among Koya women, discussed the transformative nature of English language education, and suggested

a multilingual system that is in line with the National Education Policy 2020. The argument indicates that English language proficiency may be an effective tool of empowerment that will provide access to jobs, digital opportunities, and social mobility previously inaccessible to the tribal women.

Nevertheless, the instruction in English should not be conducted at the cost of the teaching of the native language. Psychological studies always show that children acquire knowledge most easily during their first language, and cultural identity can never exist without linguistic heritage. The given framework thus promotes the idea of a balanced and supported method that supports the establishment of the foundational level of literacy in the Kaya language before slowly incorporating regional language and English, so that the learners grow with the essential multilingual competencies without losing touch with their origins. The effectiveness of this strategy will be measured by the political goodwill, long-term investment, teacher training, participation of the community, and connection with livelihood opportunities that will demonstrate the applicability of the education.

With India moving towards its 100 years of independence in the year 2047, it is in the interest of the country, a constitutional requirement, and a moral concern that tribal communities and tribal women in particular take an active part in the developmental movement of India. The idea of the education system as expressed in NEP 2020, which is that of the system providing equitable access to quality education to all groups of the society, with particular focus placed on the groups, which are deemed as Socio-Economically Disadvantaged, should be translated into tangible actions, which should extend to the tiniest village of Koyas and to the very marginalized Koya woman. Education, language, and empowerment are considered inseparable; this is why educational and linguistic marginalization of Koya tribal women needs to be thoroughly dealt with to purposefully achieve inclusive development and social justice in India.



सत्यमेव जयते



Acknowledgements

The author gratefully acknowledges ICSSR's financial support for this paper, produced under the ICSSR Major Project "Empowerment Through Language: Role of the English Language on Koya Tribal Women's Socio-economic Status" (111/2024-25/ICSSR/RP/MJ/OBC). The author also thanks the research team and Telangana Tribal Welfare Residential Degree College (Men), Affiliated Palamuru University, Nagarkurnool-509301, Mahabubnagar (dist), Telangana.

References

- Anderson, B. (2012). English in India: Colonial legacy and contemporary reality. In H. Coleman (Ed.), *Dreams and realities: Developing countries and the English language* (pp. 43-64). British Council.
- Census of India. (2011). Primary Census Abstract for Scheduled Tribes. Office of the Registrar General and Census Commissioner, Government of India.
- Chakraborty, S. (2025). NEP 2020 and English language reforms in Indian education. *Asian Journal of Education and Social Studies*, 51(5), 786-794.
- Education for All in India. (2023). Education challenges and government initiatives: A comprehensive analysis of the Scheduled Tribes population in India. Retrieved from <https://educationforallinindia.com/>
- Government of India. (2020). National Education Policy 2020. Ministry of Human Resource Development.
- Graddol, D. (2010). *English Next India: The future of English in India*. British Council.
- India Education Diary. (2020). Literacy among tribal girls and women: An overview. Retrieved from <https://indiaeducationdiary.in/>
- International Journal of Research and Innovation in Social Science. (2024). An analysis of the empowerment of Indian tribal women through education. *IJRISS*, 8(11).
- Kabeer, N. (1999). Resources, agency, achievements: Reflections on the measurement of women's empowerment. *Development and Change*, 30(3), 435-464.
- Madhu Sudhanarao, T. (2017). Ethnography of the Koya tribe in Eastern Ghats: Holistic approach. *International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology*, 6(5), 8596-8605.
- Meganathan, R. (2011). Language policy in education and the role of English in India: From library language to language of empowerment. In H. Coleman (Ed.), *Dreams and realities: Developing countries and the English language* (pp. 57-86). British Council.
- Ministry of Statistics and Programme Implementation. (2024). Periodic Labour Force Survey 2023-24. Government of India.
- Ministry of Tribal Affairs. (2024). Eklavya Model Residential Schools. Press Information Bureau, Government of India. Retrieved from <https://pib.gov.in/>
- Mohanty, A. K. (2009). *Multilingual education for social justice: Globalising the local*. Orient BlackSwan.
- Mohanty, A. K. (2019). *The multilingual reality: Living with languages*. Multilingual Matters.
- National Education Society for Tribal Students. (2024). EMRS scheme implementation status. Retrieved from <https://nests.tribal.gov.in/>
- National Knowledge Commission. (2008). *Report to the Nation 2006-2009*. Government of India.
- Naveen, S., Parida, J. K., & Panda, I. (2023). Tribal women empowerment through entrepreneurship: Evidence from Mayurbhanj District, Odisha. *Frontiers in Sociology*, 8, 1158770.
- Observer Research Foundation. (2025). NEP and the multilingual path to global competence. ORF Expert Speak. Retrieved from <https://www.orfonline.org/>



People of the World. (2023). Indigenous peoples of the world: The Koya. Retrieved from <https://www.peoplesoftheworld.org/>

PRS India. (2018). Report summary: Educational schemes for tribals. PRS Legislative Research. Retrieved from <https://prsindia.org/>

Sahu, V. K. (2024). Financial empowerment of tribal women: An inquiry into sustainable economic justice initiatives and pathways towards inclusive development. *Asian Journal of Economics, Business and Accounting*, 24(4), 182-194.

Sen, A. (1999). *Development as freedom*. Oxford University Press.

Skutnabb-Kangas, T. (2014). Language rights and the right to education. In W. F. Mackey

(Ed.), *Linguistic genocide in education—or worldwide diversity and human rights?* (pp. 1-42). Routledge.

Standing Committee on Social Justice and Empowerment. (2018). Report on educational schemes for tribals. Parliament of India.

Tudu, R., Khatua, P., & Panda, L. (2025). Education and economic dimension of tribal women empowerment in Mayurbhanj. *Economic Sciences*, 21(1), 145-152.

UNESCO. (2003). Education in a multilingual world. UNESCO Education Position Paper.

UNICEF India. (2024). Children learn best when they're taught in their mother tongue. UNICEF Stories. Retrieved from <https://www.unicef.org/india/>

सामाजिक न्याय और
अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

**एक कॉल, कई जिंदगियाँ
बदल सकता है!**

वरिष्ठ नागरिकों के लिए सहायता
☎ 14567 - एल्डर लाइन हेल्पलाइन

अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति
अत्याचार के खिलाफ मदद
☎ 14566 - राष्ट्रीय हेल्पलाइन

ट्रांसजेंडर समुदाय के लिए सहायता
☎ 14427 - राष्ट्रीय हेल्पलाइन

नशा छोड़ने के लिए सहायता चाहिए?
☎ 14446 - राष्ट्रीय नशा मुक्ति हेल्पलाइन

कचरा बीनने वालों के लिए मदद
☎ 14473 - राष्ट्रीय हेल्पलाइन

नि:शुल्क | गोपनीय | 24x7 सेवा

मदद बस एक कॉल दूर है!

सामाजिक न्याय और
अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

**पिछड़े वर्गों के लिए
वेंचर कैपिटल फंड (वीसीएफ-बीसी)**

मुख्य प्रभाव

इससे बीसी उद्यमशीलता से
संबंधित इको-सिस्टम सुदृढ़ होता है

इससे दीर्घकालिक और लाभदायक
व्यवसायों को बढ़ावा मिलता है

इससे स्थानीय आर्थिक विकास
को बढ़ावा मिलता है

इससे समावेशी विकास और रोजगार
सृजन होता है

अधिक जानकारी के लिए www.vcfsc.in पर विजिट करें

@msjg01 @msjg01 @goimsje @ministryofsocialjustice511 @media.socialjustice | @socialjustice.gov.in



Legal Forensic Validity and Socio-Economic Reality of De-notified and Nomadic Tribes in Uttar Pradesh

Dr. Gaurav Mishra¹

Dr. Shiv Poojan Prasad Pathak²

Abstract

This research paper critically examines the socio-legal existence of De-notified and Nomadic Tribes (DNTs) in Uttar Pradesh, interrogating the “forensic validity” of their continued categorization as “habitual offenders.” While the colonial *Criminal Tribes Act of 1871* was formally repealed, this study argues that its exclusionary logic persists through the *Uttar Pradesh Control of Goondas Act, 1970* and institutionalized police profiling. By shifting the analytical lens from biological forensics to “administrative forensics,” the paper shows how historical prejudice is embedded in modern policing tools, specifically within the Crime and Criminal Tracking Network & Systems (CCTNS), creating a “Digital Panopticon” that automates caste-based surveillance. The analysis further setting-up a direct causal link between this forensic stigmatization and the acute socio-economic marginalization of communities such as the *Kanjar*, *Khatik*, and *Banjara* etc who face systemic barriers in accessing housing, education, and welfare schemes like SEED. The paper concludes that the “criminal” label is an administrative construct rather than an empirical fact, advocating for legislative reform and a “forensic decoupling” of DNT identity from state security databases to restore constitutional justice.

Keywords Administrative Forensics, De-notified Tribes (DNTs), Habitual Offenders, Digital Panopticon, UP Control of Goondas Act, Socio-Legal Exclusion, CCTNS (Crime and Criminal Tracking Network & Systems).

Introduction

Epistemology and the Persistence of Stigma

The socio-legal existence of De-notified Tribes (DNTs) and Nomadic Tribes (NTs)

in Uttar Pradesh constitutes one of the most enduring paradoxes of the post-colonial Indian state. Communities such as the *Kanjar*, *Nat*, *Banjara*, and *Khurpalta* navigate a precarious existence situated at the intersection of historical criminalization, forensic stigmatization, and acute socio-economic marginalization. While the legal apparatus of the colonial state—specifically the **Criminal Tribes Act (CTA) of 1871**—has been formally dismantled, its legacy persists in the administrative unconscious of the modern police force and the rigid structures of the welfare bureaucracy (Simhadri, 1971).

This report analyzes the legal forensic validity of categorizing these tribes as “habitual offenders.” It argues that the “criminal” label is not a forensic fact based on empirical evidence of guilt, but a mechanism of state control. The colonial administration’s concept of the “born criminal” was driven by the political economy of the British Raj, specifically the desire to control forest resources (“Jal, Jangal, and Jamin”) and sedentarize mobile populations (Mishra et.al, 2022). In contemporary Uttar Pradesh, this stigma effectively excludes these communities from the mainstream economy, leaving them with “dreadful living conditions” and a contested identity (Mishra et al., 2022).

The Jurisprudence of Exclusion: From ‘Born Criminals’ to ‘Habitual Offenders’

The legal history of DNTs in Uttar Pradesh is a narrative of continuity rather than rupture. The transition from the colonial Criminal Tribes Act to the post-colonial regulatory framework did not erase the category of the “criminal tribe”; it merely sublimated the collective stigma into the individualized but equally punitive category of the “habitual offender” or “goonda.”

¹ Centre Head, International College for Security Studies (ICSS), Lucknow

² Assistant Professor, Department of Political Science, Aryabhata College, University of Delhi



1. The Architecture of the Criminal Tribes Act (CTA) 1871

The enactment of the CTA in 1871 institutionalized the concept of “collective liability.” It empowered the local government to notify entire communities as “addicted to the systematic commission of non-bailable offences” (Criminal Tribes Act, 1871). This legislation created a legal fiction that equated caste with crime. The “Criminal Tribes Manuals” of the era instructed police officers on the specific *modus operandi* allegedly unique to each tribe, embedding caste-based profiling into the policing infrastructure (Malli Gandhi, 2008).

2. The ‘Repeal’ and the Rise of the Habitual Offenders Act

Following the recommendations of the **Ayyangar Committee (1949)**, the CTA was repealed in 1952. However, the vacuum was filled by the **Habitual Offenders Act (1952)**. While this act ostensibly targeted individuals based on their criminal record, in practice, it relied on the same colonial police records (Register No. 8) that listed DNT families (Renke, 2008).

In Uttar Pradesh, the legal landscape is particularly oppressive due to the **Uttar Pradesh Control of Goondas Act, 1970**. The state government has explicitly argued that separate Habitual Offender legislation is unnecessary because the provisions of the Goondas Act are sufficient to cover these offenders (The Hindu, 2025).

- **The ‘Goonda’ Definition:** The Act defines a “Goonda” broadly as a person who is “generally reputed” to be desperate and dangerous. This “reputation” is often established by police reports rather than judicial conviction, allowing for the preventive detention and externment (expulsion) of DNT members based on suspicion alone (NLU Assam, 2023).
- **Judicial Intervention:** The Allahabad High Court has had to intervene in cases of overreach. In *Anuj Kumar vs. State of UP* (2019), the court held that the right

to privacy of a juvenile includes the right to deny information relating to criminal prosecution. This is critical for DNT youth, who are often targeted and profiled by police before they reach adulthood (IOSR Journals, 2023).

Administrative Forensics: Profiling and the Digital Panopticon

Administrative forensics in this context is the science of *classification*. The “forensic validity” of the criminal label applied to DNTs is suspect, relying on biased data collection and algorithmic surveillance rather than evidence.

1. Institutionalized Bias in Police Training

Forensic validity requires objective data. However, reports indicate that police training academies continue to teach trainees about “criminal tribes” and their specific methods of crime as if they were hereditary traits (The Swaddle, 2022). Former police commissioners have admitted that this academy training is a primary source of prejudice, teaching officers to view specific communities—like the *Pardhis* or *Kanjars*—as suspects by default (The Swaddle, 2022). This renders any “forensic profile” created by the police inherently biased.

2. CCTNS and the ‘Digital Caste Panopticon’

Uttar Pradesh has heavily invested in the **Crime and Criminal Tracking Network & Systems (CCTNS)**. While intended to modernize policing, it risks digitizing colonial bias.

- **Data Laundering:** The data fed into CCTNS is derived from historical police records (“History Sheets”). Since these records are historically skewed against DNTs, the digital database inherits this bias. When predictive policing algorithms are trained on this data, they inevitably flag DNT settlements as “crime hotspots,” leading to automated over-policing (Bokil, Sonavane, et al., 2021).

- **Surveillance:** The result is a “digital caste panopticon” where a DNT individual’s data becomes permanently accessible to law enforcement across the state, ensuring they remain the “usual suspects” for any future crime (Logic Magazine, 2020).

3. The Criminal Procedure (Identification) Act, 2022

This recent legislation allows police to collect biological samples (retina scans, fingerprints, footprints) from any arrested person, not just convicts. Given that DNTs in UP are frequently arrested under the *Goondas Act* on mere suspicion, their biometric data is being harvested at scale. This creates a forensic database overwhelmingly skewed towards these marginalized communities, effectively treating their biology as state property for 75 years (Podder, 2025).

Socio-Economic Reality: The Geography of Marginalization

The “criminal” label has devastating socio-economic consequences. The forensic stigma acts as a barrier to entry for the formal economy, housing, and education.

1. Housing and Identity

- **Dreadful Conditions:** DNT communities in UP, such as the *Khurpalta* in Agra and Mathura, often face social prejudice that forces them into the margins of urban spaces (NLU Assam, 2023). *Mishra et al. (2022)* describe their living conditions as “dreadful,” often lacking permanent structures.
- **The Document Trap:** A major hurdle is the lack of “caste certificates” or “permanent residence” proofs. In UP, revenue officials often demand land records to prove domicile. Since many DNTs are landless or live on “abadi” land without titles, they cannot produce this proof, rendering them ineligible for welfare (IDR, 2023).

2. Livelihood and Education

- **Occupational Stagnation:** Historically dependent on forests or traditional arts (like the *Nats*), these communities have been displaced. In the absence of rehabilitation, many are forced into precarious informal labor. The stigma of criminality deters private employers, creating a cycle of poverty (Mishra et al., 2022).
- **Educational Exclusion:** High dropout rates are prevalent. Children from these communities often face discrimination in schools and are compelled to work to support their families. A study in neighboring Haryana found that poverty and the need for income were the primary drivers of dropout rates among DNT children, a trend mirrored in UP (Raj et al., 2024).

The Failure of Welfare Architecture

Despite high-level policy intent, the delivery of welfare to DNTs in Uttar Pradesh is paralyzed by bureaucratic apathy.

1. The SEED Scheme: A Zero-Sum Game

The **Scheme for Economic Empowerment of DNTs (SEED)** was launched to provide coaching, health insurance, and housing. However, the Parliamentary Standing Committee on Social Justice and Empowerment noted that in the fiscal year 2021-22, the department spent **zero rupees** on the scheme (Shankar IAS Parliament, 2022).

- **Implementation Issues:** The scheme’s reliance on digital registration and caste certification creates a bottleneck. Without a dedicated state commission in UP to facilitate this, the funds remain unutilized.

2. The Missing State Commission

Unlike states like Maharashtra, Uttar Pradesh handles DNTs through the general Social Welfare Department. The **Renke Commission (2008)** and **Idate Commission (2018)** strongly recommended a permanent commission for DNTs to address their specific needs, but implementation remains sluggish (Renke, 2008).



Conclusion

The investigation concludes that the “criminal tribe” in Uttar Pradesh is an **administrative construct** rather than a valid forensic category. The use of the *Goondas Act* and “History Sheets” conflates social reputation with criminal intent, violating the principles of natural justice. This forensic stigma directly causes socio-economic destitution, trapping communities in a cycle of poverty and surveillance. True rehabilitation requires not just economic aid, but a “forensic decoupling” of the community from the criminal justice system.

References

- Bokil, A., Sonavane, N., Bej, S., Khare, A., & Janarthanan, V. (2021). *Settled Habits, New Tricks: Casteist Policing Meets Big Tech in India*. Transnational Institute (TNI).
- Criminal Tribes’ Act. (1871). *Act No. XXVII of 1871*. Government of India.
- Gandhi, M. (2008). *De-notified Tribes: Dimensions of Change*. Kanishka Publishers.
- IDR. (2023). *Welfare Schemes and Identity: What Funders Must Learn*. India Development Review.
- IOSR Journals. (2023). *Forensic DNA profiling of “habitual offenders” in Uttar Pradesh: Legal Validity*. IOSR Journal of Humanities and Social Science.
- Logic Magazine. (2020). *Building Blocks of a Digital Caste Panopticon*. Logic Mag.
- Mishra, G., Meena, A. K., & Rohit, V. (2022). *Where to claim caste: The problem of contested identities among de-notified communities*. International Journal of Health Sciences, 6(S5), 11261–11273.
- NLU Assam. (2023). *Navigating Identity and Rights: Denotified Tribes in India*. NLUALR, Volume 7.
- Podder, H. S. (2025). *DNA Profiling, Criminal Investigation, and Human Rights*. Granthaalayah.
- Raj, M., et al. (2024). *Study on Socio-Economic and Educational Status of Denotified Tribes*. ResearchGate.
- Renke, B.S. (2008). *Report of the National Commission for De-notified, Nomadic and Semi-Nomadic Tribes*. Ministry of Social Justice and Empowerment, Government of India.
- Shankar IAS Parliament. (2022). *State of Denotified Tribes: Standing Committee Report*. Shankar IAS Academy.
- Simhadri, Y. C. (1971). *Denotified Tribes: A Sociological Analysis*.
- The Hindu. (2025). *How do habitual offender laws discriminate?*. The Hindu Explainer.
- The Swaddle. (2022). *Delhi Crime Season 2 shows the injustices India’s criminal tribes face*. The Swaddle.



सामाजिक न्याय संदेश

सदस्ता कूपन

मैं, डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केंद्र द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका “सामाजिक न्याय संदेश” का ग्राहक बनना चाहता/चाहती हूँ/शुल्क; वार्षिक सदस्ता शुल्क ₹ 200/ डिमांड ड्राफ्ट नम्बर दिनांक संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट ‘डॉ. अम्बेडकर केंद्र के नाम नई दिल्ली के नाम पर हों

नाम (स्पष्ट अक्षरों में)

पता

..... पिन

फोन/मोबाईल न. ई. मेल :

इस कूपन को काटिए और डिमांड ड्राफ्ट सहित निम्न पते पर भेजिए:

डॉ० अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केंद्र:
15 जनपथ, नई दिल्ली-110 001





DEPARTMENT OF SOCIAL JUSTICE AND EMPOWERMENT
Ministry of Social Justice and Empowerment
Government of India



Development and Welfare Board for De-notified
Nomadic and Semi Nomadic Communities

#PathToEmpowerment

एसईईडी (SEED) योजना के तहत डीएनटी (DNT) छात्रों के लिए निःशुल्क कोचिंग

विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध-घुमंतू जनजातियों
से आने वाले छात्रों का सशक्तिकरण

प्रमुख प्रतियोगी परीक्षाओं की कोचिंग हेतु: जेईई (JEE), नीट (NEET), क्लैट (CLAT), एनडीए (NDA), गैर-कमीशन सैन्य रैंक, सीए-सीपीटी (CA-CPT), बैंकिंग, बीमा, पीएसयू (PSU), एसएससी (SSC), आरआरबी (RRB), राज्य और केंद्रीय पुलिस, आदि।

कोचिंग शुल्क सहायता:

₹1,20,000 तक की राशि एवं अन्य लाभ



सामाजिक न्याय और
अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार



अनुसूचित जातियों के लिए वेंचर कैपिटल फंड (वीसीएफ-एससी)

उपलब्ध कराए जाने वाले अवसर:

- ✓ इसके अंतर्गत पात्र उद्यमों के लिए 75% तक वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जाती है
- ✓ इससे बचत और व्यवसाय वृद्धि में प्रोत्साहन मिलता है
- ✓ इससे अनुसूचित जाति के अधिक से अधिक उद्यमियों को प्रोत्साहन मिलता है
- ✓ इससे वित्तीय समावेशन होता है और सामुदायिक समृद्धि होती है
- ✓ इससे रोजगार सृजन में बढ़ावा मिलता है



GUIDELINES FOR SUBMISSION OF MANUSCRIPTS

Dr. Ambedkar International Centre (DAIC), located at 15, Janpath, New Delhi is a premier International Centre of Excellence of the Ministry of Social Justice and Empowerment, Govt. of India <http://daic.gov.in/about.html>. DAIC, at 15 Janpath, Delhi was inaugurated by the Hon'ble Prime Minister of India on 7th December 2017. DAIC has been envisaged to be the Centre of Excellence for study, research, analysis and policy briefs in the field of Dr. B.R. Ambedkar's vision, theories, philosophy and policies; socio-economic transformation and inclusive sustainable development and livelihoods; Buddhist studies-thought, culture and philosophy; social wellbeing.

The DAIC is conducting international level reputed research, documentation, database development publications knowledge dissemination, publicity, networking, collaboration with national and international institute/university. DAIC is organizing capacity building programme, training, seminar, conferences and symposium etc. on various interdisciplinary and multidisciplinary issues.

Samajik Nyay Sandesh is the official Quarterly Bilingual Peer Reviewed Journal publication of Dr. Ambedkar International Centre. The aim to publish this journal is to disseminate policies and research work for the upliftment of the marginalized group of the society. This is multi-disciplinary perspective, the journal publishes the best scholarship emanating from multidisciplinary research from demography, sociology, economics, political studies, anthropology, economics and psychology and other discipline of social sciences. The journal is published as a hard copy, print ISSN number being: 2455-6681.

Manuscripts from distinguished scholars are invited in the form of original research paper, articles, review article, reviews (book/policy/ research project) and success stories of the applied action oriented work related to the theme of the journal for the upcoming issue of the Samajik Nyay Sandesh.

The journal has a peer review process, which is fair, unbiased, and timely. The research articles are reviewed by an external and independent reviewer, and wherever necessary the editor seeks an additional opinion.

Ethics Policy

Only original work not published elsewhere, in whole or in part, is published. Authors are required to give a certificate to this effect at the time of submission for publication. The contributions are screened carefully to detect any regional, political, religious, and social or gender bias. The conclusions drawn are expected to be based only on processed data. The journal is particularly averse to any kind of plagiarism/plagiarized material.

Instructions to Authors for manuscript preparation Submission of Manuscripts: Manuscripts can be submitted through email as an attachment at Chief Editor **email: snsdaic123@gmail.com**

Manuscripts should be typed and double-spaced with maximum 3500 words. Manuscripts should be carefully checked before submission and must be preceded by a cover page, listing the title of the paper, full name(s) of the author(s), and their mailing address.

The manuscript should be prepared in English using "MS Word" and "Times New Roman" font and in Hindi 12 font size Kruti Dev. The pages should be numbered consecutively, starting with the title page and through the text, reference list, tables and figure legends.

The title page should contain Title, Authors, Affiliations, and Corresponding author and address. The title should be brief, specific and amenable to indexing. Not more than five keywords should be indicated separately, these should be chosen carefully and must not be phrases of several words.

Page number and caption of the figures and diagram are need to be placed properly. Page number are to be placed in the upper right hand corner of every page.

References The list of References at the end of the text should be in the MLA 7th style. Reference should be arranged in alphabetical and chronological order. In the text, author's surname, followed by year of publication and relevant page number.



सत्यमेव जयते

वर्ष : 22

अंक : 01

RNI No. DELIN/2000/9036

सामाजिक न्याय संदेश

जनवरी-फरवरी-मार्च 2026

आगामी अंक

ISSN 2455-6181

अप्रैल-मई-जून 2026

₹ 50/-



सत्यमेव जयते

डॉ. अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार
15 जनपथ, नई दिल्ली-110001